चतुर्थ अध्याय

"आचार्य चतुरसेन शास्त्री की कहानियों के पुरुष पात्र"

ऐतिहासिक पात्र

अर्ध-ऐतिहासिक पात्र

काल्पनिक पात्र

वर्गगत पात्र

व्यक्ति पात्र

हिंदी साहित्य के महान शिल्पी कथाकार आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने सन् 1906-07 ई0 में अपना लेखन कार्य प्रारम्भ किया था, जब वे पांचवीं या छठवीं कक्षा में पढ़ते थे। उस समय उनकी पहली कविता 'श्री बेंकटेश्वर समाचार' में छपी थी| इसके पश्चात उनका लेखन कार्य धीरे-धीरे प्रगति करता रहा और उन्होंने अपनी पहली कहानी 'सच्चा गहना' लिखी| इस प्रसिद्धि के उपरान्त वे लगातार कहानियां लिखने लगे| 'सच्चा गहना' कहानी सन् 1917-18 में 'गृहलक्ष्मी' नामक मासिक पत्रिका में छपी थी| शास्त्री जी ने मानव समाज में व्याप्त कुरीतियों, अन्धविश्वासों एवं राजनैतिक तथा ऐतिहासिक विषयों पर अपनी लेखनी के माध्यम से प्रकाश डाला है| वे बौद्ध कालीन, दिल्ली सल्तनत और मुगल कालीन कहानियां अत्यधिक लिखे हैं, उनकी काल्पनिक कहानियों की भी संख्या अधिक है|

प्रसिद्ध उपन्यासों के अतिरिक्त उन्होंने हिंदी साहित्य में समाज के विभिन्न क्षेत्रों से वर्ण्य विषय को चुनकर अनेक प्रकार की कहानियों का सृजन किया| जैसा कि उनकी कहानियों से पता चलता है कि जहाँ बौद्ध कालीन कहानियों में महात्मा बुद्ध के द्वारा दिये गये उपदेशों के महत्व को आम जनता तक पहुँचाने का प्रयास किया गया है, वहीं पर इन अमृतमयी उपदेशों को जीवन में उतारकर मनुष्य अपना जीवन सार्थक कर सकता है| वहीं अगर दिल्ली सल्तनत की बात की जाये तो उनकी कहानियों में पुरुष पात्र समाज के हर वर्ग से लिये गये हैं|

चाहे ऐतिहासिक क्षेत्र हो या राजनैतिक, चाहे उच्च वर्ग हो या निम्न अथवा मध्यम सभी तरह के पात्र सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं| शास्त्री जी की मुगल कालीन कहानियां मुगलकाल और राजपूती जीवन से सम्बंधित हैं, जो मुगलों तथा राजपूतों के शौर्य, पराक्रम और उनके भीतर की अथाह शक्ति का परिचय देती हैं| आचार्य जी की कहानियों के पात्रों में सजीवता और स्वाभाविकता, आत्मसमर्पण की भावना, राज्य की सुरक्षा हेतु कुछ भी कर जाने का अद्भुत साहस दिखाई पड़ता है|

प्रस्तुत कहानियों में दृश्यों, घटनाओं के परिवर्तित होने के साथ ही साथ पात्रों में एक प्रकार से जीवन का संचार हो उठता है| वे किसी के सहारे न खड़े होकर स्वावलम्बी बनते दिखाई पड़ते हैं| वे अपने स्वाभिमान और मर्यादा की रक्षा करते हुए स्वयं के पैरों पर निर्भर होते हैं| अलग-अलग कहानियों के पात्र विभिन्न प्रकार से अपनी शक्ति, बुद्धि, और अपनी वीरता को प्रदर्शित करते हैं| इस अध्याय में हम चतुरसेन शास्त्री की कहानियों के केवल पुरुष पात्रों का अध्ययन करेंगे| अगले अध्याय में स्त्री पात्रों का भी यथा स्थान चित्रण किया जायेगा|

ऐतिहासिक पात्र

1- वीर बादल

यह एक ऐतिहासिक कहानी है जिसमें राजस्थान के चित्तौड़गढ़ किले का वर्णन मिलता है| यह कहानी चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी के अदम्य साहस तथा उनकी प्रतिष्ठा को अंकित करती है| इसकी शुरुआत तेरहवीं शताब्दी में अलाउद्दीन खिलजी के चित्तौड़गढ़ दुर्ग पर आक्रमण से प्रारम्भ होती है। बादल नामक एक अल्पवयस्क वीर के साहस का परिचय मिलता है जिसने अपने शौर्य के बल पर महारानी पद्मावती का मान-सम्मान और प्रतिष्ठा को बरकरार रखा। इस कहानी के प्रमुख ऐतिहासिक पुरुष पात्रों का परिचय निम्नलिखित है ।

अलाउद्दीन-

अलाउद्दीन वह शासक था जो अपने चाचा की हत्या करके दिल्ली के सिंहासन पर बैठा था| उसने अपने आस-पास के कई राज्यों को विजित कर लिया था तथा निरंकुश होकर शासन चलाता था| यह एक ऐतिहासिक पात्र के रूप में उभरकर सामने आता है, जिसका परिचय अमरेन्द्र कुमार मिश्र अपनी पुस्तक 'भारत में मुस्लिम साम्राज्य' में देते हुए लिखते हैं कि "पितृविहीन अलाउद्दीन खिलजी का पालन पोषण उसके चाचा जलालुद्दीन फिरोज ने किया था| फिरोज अपने इस भतीजे को इतना अधिक प्यार करता था कि उसे अपना दामाद भी बना लिया| दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठने के बाद फिरोज ने उसे कड़ा की जागीर दे दी| यहीं अलाउद्दीन के दिमाग में महत्वाकांक्षा के बीज बोये गये|"[1]
मुस्लिम राज्य का भारत के विभिन्न भागों में अति शीघ्रता के साथ विस्तार हुआ| अलाउद्दीन के समय में यह अत्यंत निर्दयी और इन्द्रियलोलुप पठान था| अलाउद्दीन ने चित्तौड़गढ़ की रानी पद्मावती के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर राजा रत्नसिंह के किले पर आक्रमण किया था, जबकि विभिन्न विद्वान अपना अलग-अलग तर्क देते हैं| कहीं- कहीं ये भी कहा जाता है कि अलाउद्दीन ने पद्मावती के अद्भुत सौन्दर्य को पाने की चाहत में नहीं अपितु साम्राज्य के विस्तार के लिए आक्रमण किया था। जैसा कि "यह आक्रमण भी सम्भवत: रणथम्भौर के विरुद्ध किये गए आक्रमण के सदृश सुल्तान की राज्य विस्तार की महत्वाकांक्षा

पूर्ण इच्छा का फल था| यदि परम्पराओं का विश्वास किया जाये तो इसका तात्कालिक कारण था राणा रत्नसिंह की अत्यंत रूपवती रानी पद्मिनी के प्रति उसका मोहित होना, किन्तु इस बात का किसी भी समकालीन इतिहास अथवा अभिलेखों में स्पष्ट उल्लेख नहीं है|”[2]

इसी तरह से एक अन्य लेखक सोहन राज तातेड़ ने अपनी पुस्तक ‘मध्यकालीन भारत का इतिहास भाग -1 में अलाउद्दीन के चित्तौड़ आक्रमण का कारण बताते हुए लिखा है कि “कुछ इतिहासकारों का मानना है कि अलाउद्दीन ने 1303 ई. में मेवाड़ के राणा रत्नसिंह की सुन्दर रानी पद्मिनी को प्राप्त करने के लिए चित्तौड़ पर आक्रमण किया, जबकि डॉ. लाल तथा डॉ. गौरीशंकर ओझा के अनुसार उसने साम्राज्य विस्तार करने के लिये चित्तौड़ पर आक्रमण किया था|”[3]

आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने प्रस्तुत कहानी ‘वीर-बादल’ में रानी पद्मावती को ‘पद्मिनी’ तथा राजा रतनसेन को ‘भीमसिंह’ के नाम से चित्रित किया है| वे पूरी कथा को ऐतिहासिक रूप में लिखते हैं परन्तु उसके पुरुष पात्र रतनसेन के स्थान पर भीमसिंह को चित्तौड़गढ़ की महारानी पद्मावती के पति के रूप में वर्णित किया है जो सही नहीं है, इसका प्रमाण अनेक विद्वान लेखकों ने अपने-अपने अनुसार दिया है-

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार-

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिंदी साहित्य के प्रकाण्ड विद्वान, साहित्यकार एवं आलोचक हैं| शुक्ल जी द्वारा लिखित 'हिंन्दी साहित्य का इतिहास' सर्वोच्च स्थान पर प्रमाणिक माना जाता है| उनके साहित्य में लिखे गये एक-एक शब्द अकाट्य माने जाते हैं| उन्होंने मलिक मोहम्मद जायसी की रचना 'पद्मावत' में चित्तौड़गढ़ की रानी पद्मावती तथा राजा रतनसेन के होने की पुष्टि की है| वे लिखते हैं कि "राजा गन्धर्वसेन की आज्ञा से रतनसेन को सूली देने ले जा रहे थे कि इतने में सोलह हज़ार जोगियों ने गढ़ को घेर लिया| महादेव, हनुमान आदि सारे देवता जोगियों की सहायता के लिये आ गए| गंधर्वसेन की सारी सेना हार गई| अंत में जोगियों के बीच शिव को पहचान कर गंधर्वसेन उनके पैरों पर गिर पड़ा और बोला कि पद्मावती आपकी है जिसको चाहे दीजिए| इस प्रकार रतनसेन के साथ पद्मावती का विवाह हो गया और दोनों चित्तौड़गढ़ आ गये|"[4]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने अपनी रचना 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में चित्तौगढ़ के राजा रतनसेन और चित्तौड़गढ़ की महारानी नागमती और पद्मावती का वर्णन करते हैं| वे कहते हैं कि जब रतनसेन की मृत्यु हो गई तब "रतनसेन का शव चित्तौड़गढ़ लाया गया| उसकी दोनों रानियाँ नागमती और पद्मावती हँसते- हँसते पति के शव के साथ चिता में बैठ

गईं| पीछे जब सेना सहित अलाउद्दीन चित्तौड़ में पहुँचा तब वहां राख के ढेर के सिवा कुछ न मिला|”[5]

अमरेन्द्र कुमार सिंह के अनुसार -

इनका भी मानना है कि चित्तौड़गढ़ की महारानी पद्मावती और महाराजा रतनसेन थे जो गंधर्वसेन की कन्या पद्मावती को ब्याह करके लाये थे| “यदि परम्पराओं का विश्वास किया जाए तो इसका तात्कालिक कारण था राणा रतनसेन की अत्यंत रूपवती रानी पद्मावती के प्रति उसका मोहित होना|”[6]

इस प्रकार आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी की कहानी वीर-बादल में चित्तौड़गढ़ के राजा भीमसिंह के स्थान पर राजा रतनसेन ही पढ़ा जाये जो कि ऐतिहासिक दृष्टि से प्रमाणित भी हो गया है| अतः हम आगे भीमसिंह के स्थान पर रतनसेन का ही नाम रखकर उन्हें ऐतिहासिक पात्र के रूप में वर्णित करेंगे|

जब अलाउद्दीन चित्तौड़गढ़ के राजा रतनसेन की पत्नी के रूप-सौन्दर्य के बारे में सुनता है तो वह उसके प्रेम में आसक्त हो जाता है और उसे अपनी रानी बनाने के सपने देखने लगता है। साम्राज्य विस्तार तथा पद्मावती के आकर्षण के फलस्वरूप उसने चित्तौड़गढ़ पर आक्रमण कर दिया| चित्तौड़ के किले को लगभग 9 मास तक घेरे रहा फिर भी सफलता न मिली| छल, कपट, कूटनीति इत्यादि के बल पर उसने राजा

रतनसेन से संधि कर लिया और यह शर्त रखी कि मैं पद्मावती की एक झलक देखना चाहता हूं तत्पश्चात मैं दिल्ली वापस चला जाऊंगा। यह सुनकर पद्मावती पहले तो क्रोधित हुई परन्तु बाद में चित्तौड़ के दुर्ग की रक्षा के लिये, एक आईने में अपना रूप दिखाने को तैयार हुई| "सामने पूरे कद के आईने में वह अलौकिक सुन्दरी जैसे रत्नों से जड़ी तस्वीर हो- लाज से सिर नवाए खड़ी है, एक झलक सुल्तान ने देखा, और वह झलक दर्पण से गायब हो गई| सुल्तान निश्चल हो गया, इस सौन्दर्य की उसने कभी कल्पना भी न की थी|"[7]

अन्ततः अलाउद्दीन राजा रतनसेन को बंदी बनाकर ले जाता है। पद्मावती अपने नीति के बल पर उनको वापस छुड़ा लेती है, परन्तु कुछ समय पश्चात अलाउद्दीन चित्तौड़ पर पुनः आक्रमण करता है और पद्मावती को मजबूरन जौहर करना पड़ता है| अलाउद्दीन एक अत्याचारी, लोभी, भोग-विलासी तथा दुराचारी शासक के रूप में सामने आता है| वह अपने परिवार के ही कई सदस्यों को मौत की नींद सुला देता है| उसके शासन में जनता त्रस्त और भयभीत ही रहती थी|

रतनसेन-

राजा रतनसेन चित्तौड़गढ़ के यशस्वी सम्राट थे| अपने राजपूती वचन को निभाने के लिये यदि उन्हें अपने प्राण भी देने पड़े तो वे उसे एक तुच्छ वस्तु समझकर तत्क्षण देने को तैयार हो जाते थे| वे एक ऐसे वीर एवं साहसी राजा थे जिन्होंने अलाउद्दीन के आक्रमण का कई बार

मुंह तोड़ जवाब भी दिया था| अपनी सेना और चित्तौड़ की रक्षा के लिये अपनी सबसे कीमती दौलत 'पद्मावती' को उस कपटी अलाउद्दीन को दिखाने हेतु प्रस्तुत कर देते हैं| इसके बावजूद छल से रतनसेन को अलाउद्दीन अपने जाल में फांस लेता है| वीर बादल नामक वीर के सहयोग से पद्मावती उन्हें छुड़ा लेती है|

गोरा और बादल-

गोरा और बादल बहुत ही वीर और साहसी थे| उनके पराक्रम को देखकर अलाउद्दीन की सेना के छक्के छूट गये| वीर-बादल वीरता तथा निडरता के साथ पठानों की सेना को गाजर मूली की तरह काट रहा था| अन्त में बादल ने गोरा से कहा- "काकाजी हम उस लोक में मिलेंगे- गोरा घाव खाकर गिर पड़ा| बादल ने देखा और शत्रुओं को चीरते हुए जोर से कान के पास पुकारा, मैं काका जी, आपकी वीरता का बखान करूँगा| महाराणा सेना लेकर आ रहे हैं|"[8]

2. नूरजहाँ का कौशल-

यह कहानी दिल्ली के मुगल सम्राट जहाँगीर और उनकी बेगम नूरजहाँ के आपसी प्रेम और शासन सम्बन्धी गतिविधियों को उजागर करती है| ये दोनों प्रेमी आपस में इतना प्रेम और सम्मान की भावना रखते थे कि एक दूसरे के प्रति अपने प्राणों को अर्पण कर देना इनके लिए कोई बड़ी बात नहीं थी| इनके प्यार की तुलना कबूतर-कबूतरी के

जोड़े से की गई है| इस कहानी के प्रमुख ऐतिहासिक पुरुष पात्र जहाँगीर, महावत खां, आसफउद्दौला और खुर्रम प्रमुख हैं|

जहाँगीर-

मुगल सम्राट जहाँगीर प्रतापी एवं वीर सम्राट था| वह अपने राज्य के शासन को अच्छी तरह से चलाना जानता था किन्तु अपनी पत्नी नूरजहाँ के प्रेम में आसक्त होकर तथा निश्शंक सुरा, संगीत और सुन्दरी-सेवन से अपने राज्य की कानून व्यवस्था को भूलता जा रहा था| "सन् 1605 ई. में जब अकबर की मृत्यु हो गयी तो जहाँगीर सम्राट हुआ| उसने सामान्यतया अकबर की ही नीति का अनुसरण किया| वह बहुत उदार हृदय, न्यायपरायण और विलासी था| जहाँगीर का दरबार बहुत समृद्धशाली था| उसकी स्त्री नूरजहाँ बहुत प्रतिभाशाली थी| उसके प्रभाव के अन्तर्गत राजसभा और साम्राज्य में ईरानियों का प्रभाव विस्तार होने लगा|"[9]

जहाँगीर प्रतापी राजा होने के साथ-साथ दूरदर्शी तथा न्यायप्रिय भी था| उसके शासन सम्बन्धी नीतियों की देख-रेख उसकी पत्नी नूरजहाँ करती थी| जहाँगीर के सम्बन्ध में उसके स्वभाव तथा उसके वैयक्तिक जीवन के बारे में बताते हुए आचार्य जी लिखते हैं कि "और जहाँगीर में क्या था? असाधारण बड़प्पन, उदारता, प्रेम और सुकुमारता| निःसंदेह वह बादशाह के पद के योग्य न था| बादशाह होने के लिये जो कठोरता, रुक्षता, कौशल और दूरदर्शिता होनी चाहिए वह जहाँगीर में न थी। वह

एक प्रेम का मतवाला रईस था| वह जिस स्त्री के रूप में अपने यौवन के उदयकाल में डूबा, उसके स्वाद का प्रलोभन वह दस वर्ष व्यतीत होने पर भी, उस रूप के जूठे और किरकिरे होने पर भी, उसमें जहर मिल जाने पर भी, संवरण न कर सका|”[10]

प्रस्तुत कहानी में कुल मिलाकर जहांगीर एक अकुशल, अयोग्य शासक के रूप में उभरकर सामने आता है| वह अपने शासन का कार्यभार अपनी मर्जी से चलाने में अक्षम दिखाई देता है। वह सुरा-शराब के नशे में इतना धुत हो जाता था कि धीरे-धीरे उसके शासन की निंदा होने लगी| वह नूरजहां के प्यार में इतना अंधा हो गया था कि उसे राज्य के बारे में कुछ सोचने का समय ही न मिल पाता था| नूरजहाँ बराबर उसके शासन को सम्भालती रही| जहांगीर तो एक प्रकार से नाममात्र का शासन चलाता था। वास्तविक राजसत्ता तो नूरजहाँ के पास ही थी| वह अपने पसंदानुसार सैनिकों को रखती थी तथा जिसे अच्छा नहीं समझती थी उसे सेना से बाहर भी कर देती थी| नूरजहाँ ने शहजादे खुसरू का क़त्ल भी राज्य को अपने अधिकार में लेने के लिये किया था जिसका दोष वह शहजादे खुर्रम पर लगाती है| इन सबके बावजूद एक बार जहांगीर अपने सेनापति महावत खां से नूरजहाँ के लिए जीवनदान की भीख मांगते दिखाई पड़ते हैं| इस तरह जहाँगीर सुरा, शराब तथा नूरजहाँ के प्रेम में मदमस्त होकर शासन की बागडोर संभाल रहा था| “उसके लिये उसने लोक-लाज, न्याय,

अपना पद-गौरव साम्राज्य सभी कुछ संसार की दया पर छोड़ दिया| रूप का ऐसा दयनीय भिखारी शायद ही पृथ्वी पर उत्पन्न हुआ हो|”[11]

जहाँगीर के व्यक्तित्व तथा उसकी पत्नी नूरजहाँ के शासन सम्बन्धी योगदान को बताते हुए अमरेन्द्र सिंह लिखते हैं कि “गवर्नर को मारकर जहाँगीर ने उसकी पत्नी नूरजहाँ को अपनी पत्नी सलीमा बानू बेगम की परिचारिका के रूप में नियुक्त किया| मई 1611 ई. में जहाँगीर ने नूरजहाँ के साथ विवाह किया| नूरजहाँ का मूल नाम मेहरुन्निसां था| उसने उसके जीवन तथा राज्य काल को बहुत प्रभावित किया|”[12]

आसफ खां-

यह एक ऐतिहासिक पात्र है जो मुगलकालीन सम्राट जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ का भाई तथा जहाँगीर का साला था| आसफउद्दौला ने अपनी बहन नूरजहाँ की शादी पहले शेर अफगन से कर दिया था परन्तु जहाँगीर ने उसके पति को मारकर उसे अपनी पूर्व पत्नी सलीमा बानू की परिचारिका के रूप में रख लिया तत्पश्चात उसी से शादी कर लेता है, जो बाद में साम्राज्ञी की तरह जहाँगीर के साथ शासन में उसका सहयोग करती है|

शेर अफगन -

नूरजहाँ का पूर्व पति शेर अफगन था जिसकी हत्या करके जहांगीर, नूरजहाँ को अपनी पत्नी बनाता है|

खुर्रम -

ये जहाँगीर के शहजादे थे जिनके ऊपर कूटनीति पूर्वक नूरजहाँ ने शहजादे खुसरू के कत्ल का इल्जाम लगाया था| नूरजहाँ खुर्रम को गिरफ्तार करवाने के लिये अपने सेनापति महावत खां से कहती है परन्तु महावत खां इनकार कर देता है|

महावत खां -

महावत खां सुल्तान जहाँगीर का प्रधान सेनापति था| वह अत्यंत स्वाभिमानी तथा कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति था| सत्य वचन का पालन करना अपनी शान समझता था| किसी को दिये गये वादे को पूरा करने के लिये अपने प्राणों तक की बाजी लगा देना उसके लिये आम बात थी| प्रस्तुत कहानी में ऐतिहासिक पुरुष महावत खां की साहस, वीरता और आत्म-सम्मान को व्यक्त किया गया है| जब नूरजहाँ खुर्रम को कैद करने के लिये कहती है तो महावत खां नूरजहाँ से बड़े गर्व के साथ कहता है कि “माफ़ कीजियेगा मलिका साहिबा, मैं शहजादे को जबान देकर लाया हूँ कि आपके सब कसूर माफ़ किये जायेंगे| ऐसी हालत में शहजादे को गिरफ्तार करना धोखेबाजी है जिसमें बंदा शरीक होने से इनकार करता है|”[13]

प्रसिद्ध लेखक अमरेन्द्र कुमार सिंह जी अपनी पुस्तक ‘भारत में मुस्लिम साम्राज्य’ में महावत खां के विषय में कहते हैं कि “महावत खां जो जन्म से अफगान था और जहाँगीर के राज्यकाल के प्रारम्भ में केवल 5 सौ का मनसब था पर शीघ्रता से ऊंचे पदों पर नियुक्त किये जाने के

कारण उसने बादशाह की उत्कृष्ट सेवा की| विशेष रूप से शाहजहाँ के विद्रोह का दमन करने में उसे सफलता मिली”[14]

आचार्य जी की कहानी के पात्र कहीं-कहीं अपने स्वाभिमान और वचन का पालन करने के लिये, अपने राजाओं से भी साहस पूर्वक बात करते हैं तथा उनकी बातों को नजर अंदाज करते हुए दिखाई पड़ते है क्योंकि एक पुरुष के लिये उसके स्वाभिमान से बढ़कर कुछ भी नहीं होता| जब खुर्रम को गिरफ्तार करने के आदेश का पालन न करने पर, सैनिकों से महावत खां को पकड़ने के लिये नूरजहाँ कहती है तब यह निर्भीक और निडरता के साथ कहता है कि -“मलिका साहिबा बीस साल से मैं इन सिपाहियों का सिपहसालार हूँ| इन्हें मैं अगणित बार युद्ध के मैदान में ले गया हूँ और फतह का सेहरा इनके सिर पर बाँधकर ले आया हूँ| कितनी बार इन्होंने जाने देकर मेरी हिफाजत की है| अब उनकी इतनी जुर्रत नहीं हो सकती कि मुझे गिरफ्तार करें| हाँ बादशाह सलामत आपके सामने यह सिर और हाथ हाजिर है, बांधिये या कत्ल कीजिये|”[15]

3. शराबी की बात:

यह एक ऐतिहासिक कहानी है जिसमें मुगल सम्राट जहाँगीर की शासन व्यवस्था का अत्यंत मनोहारी वर्णन प्रस्तुत किया गया है| जहाँगीर के शासन काल में ऊंच-नीच का भेद भाव समाप्त हो गया था| शराब और सुंदरी ही जहाँगीर का व्यसन था| वह खुश मिजाजी स्वभाव का सम्राट था| जहाँगीर ने अपने राज्य में शासन व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने

के लिए सख्त कानून बनाया था| वह मुल्लों-मौलवियों से चिढ़ता था| रमज़ान के वक्त अक्सर वह हाथियों पर बैठकर बाहर जाता और खूब दान करता, किसी भी दान में एक लाख से कम न देता था| इस कहानी के प्रमुख पुरुष पात्रों में जहाँगीर, आसफ खां और सिकंदर जुलाहा है|

सम्राट जहाँगीर-

ये मुगल सम्राट थे| दिल्ली के सिंहासन पर अपनी कीर्ति का पताका फहरा रहे थे| शराब और सुन्दरी ही इनके जीवन का सबसे बड़ा शौक था| स्वभाव से जहाँगीर निराला था| वह अपने पिता बादशाह अकबर के विद्वानों की सोहबत और धर्म-चर्चा का बहुत मजाक उड़ाया करता था| मुल्लों और मौलवियों को परेशान एवं उनका अपमान करने के लिये, हाथियों के ऊपर बने खाने को खाता जाता था और उसी हाथ से उन्हें भी देता जाता था| जैसा कि "उसे मौलवियों से बड़ी चिढ़ थी| रमजान के दिनों में बादशाह हाथियों पर बैठकर बाजार में निकला करता था| खाना हाथियों पर पकता रहता और बादशाह खाता जाता था| वह मुल्लों को तंग करने के लिये उन्हें अपने हाथ से खाना देता था। दरबारी कायदे के अनुसार उन्हें खाना पड़ता था वरना शेरों से फड़वा डालने का भय था जो पास ही दरबार में बंधे रहते थे| बादशाह बड़ा दाता था यदि किसी को कुछ देता तो एक लाख से कम न देता था|"[16]

जहांगीर अपने शासन को सुचारु रूप से चलाने के लिये अधिकतर खलीफा हारू-अल-रशीद की भाँति वेश-भूषा बदलकर रात को शहरों में

अपने मंत्रियों के साथ अथवा कभी-कभी अकेले भी घूमा करते थे| एक बार वे अपने मंत्रियों के साथ रात में टहल रहे थे तभी शराब के ठेके पर एक जुलाहा ताबड़-तोड़ शराब पी रहा था और गुनगुना रहा था| जहाँगीर उसके पास पहुँचकर कहते हैं कि "कहो दोस्त, खूब उड़ रही है| मजे में पियो यार, अभी आधी बोतल भरी है| जेब में खनाखन हैं, आज ही अद्धी बेची थी- खूब पियो, कहकर उसने खूब खिल-खिला कर हँसने के बाद चुक्कड़ भरकर बादशाह के हाथ में थमा दिया|"[17]

जब वह शराबी उठकर जाने लगा तो उसने अगले दिन उन्हें अपने घर पर शराब और भोजन के लिये दावत दे दी| सम्राट जहाँगीर भी उसकी दोस्ती का मान रखने के लिये उसके घर पहुँचे| उस शराबी जुलाहे का नाम था 'सिकंदर'| सिकंदर को जब पता चला कि उस समय शराब के ठेके पर कोई और नहीं बल्कि दीन दुखिया के मालिक सुलतान जहाँगीर थे तो उसकी आँखे शर्म से झुक गईं| सिकंदर के पास तो खाने की कुछ व्यवस्था भी न थी| सम्राट ने आदेशित करके सब कुछ तैयार कराया और सिकन्दर के साथ बैठकर भोजन किया| तत्पश्चात उसके साथ जी भर कर शराब भी पी| कुछ समय बाद जहाँगीर ने उस जुलाहे के लिये एक आलीशान महल बनवा दिया| जहाँगीर के चरित्र के सम्बन्ध में इतिहासकारों का अलग-अलग मत दिखाई पड़ता है-

यूरोपीय इतिहासकारों के अनुसार- वह निर्दयी, चंचल स्वभाव वाला, शराबी एवं भोगविलासी था

भारतीय इतिहासकारों के अनुसार- वह बुद्धिमान, दयालु तथा न्यायप्रिय सम्राट था|

बेबरिज के अनुसार- "वह खड़ा होकर यदि आँखों के सामने देख सकता था तो निष्पक्ष न्याय भी कर सकता था| एक तरफ उसका हृदय इतना दयालु था कि शीतकाल में हाथियों के बदन पर पानी छिड़कने से उनके हृदय काँपते देख वह स्वयं कांपने लग जाता था|"[18]

जहांगीर एक पारिवारिक जीवन व्यतीत करने वाला सुल्तान था| वह कला और साहित्य से प्रेम करता था| जैसा कि इतिहास में मिलता है कि "जहाँगीर कला एवं साहित्य में बड़ी रुचि रखता था| वह स्वयं एक महान चित्रकार था| उसने उस्ताद मंसूर, बिशनदास, अब्दुल हसन आदि चित्रकारों को संरक्षण दिया था|"[19]

आसफ अली-

आसफ अली एक ऐतिहासिक पात्र है| यह सम्राट जहाँगीर का साला एवं वजीरे आजम था| जो राजा के साथ-साथ शासन के कार्यों में सहयोग करता है| इनके विषय में आचार्य जी ने ज्यादा कुछ नहीं लिखा है|

सिकंदर जुलाहा-

घनी आबादी वाला शहर दिल्ली की गुमनाम गलियों के बीच साधारण सा जीवन व्यतीत करने वाला वह एक जुलाहा था| वह धीरे-धीरे शराब का सेवन अधिक करने लगा था| एक दिन जब वह जुलाहा शराब पीकर नशे में धुत था| तब सम्राट जहाँगीर वेश बदलकर उसके पास आये तो जुलाहे ने उन्हें शराब पिलाकर अपना दोस्त बना लिया और अगले दिन भोजन और शराब का उन्हें निमंत्रण दे डाला| जब सम्राट सिकंदर जुलाहे के घर पहुँचते हैं तो -"सिकंदर की आँखें फटी की फटी रह गईं| कुछ देर उसके मुंह से आवाज नहीं निकली, वह चुपचाप भीतर चला गया|"[20]

अंततः भोजन करने और शराब पीने के पश्चात सम्राट अपने महल को लौट आये और उस जुलाहे के लिये एक महल बनवाने का आदेश दे डाला|

4. जैसलमेर की राजकुमारी:

यह भी एक ऐतिहासिक कहानी है जिसके प्रमुख पुरुष पात्र ऐतिहासिक हैं जिनमें प्रमुख रूप से रत्नसिंह, अलाउद्दीन, मलिक काफूर आदि हैं| यह कहानी राजपूतों के साहस, धैर्य एवं वीरतापूर्ण घटनाओं का दिग्दर्शन कराती है जिसमें वीर महाराव की पुत्री 'रत्नवती' के पराक्रम, शौर्य, अद्भुत कार्य क्षमता की स्पष्ट झलक देखने को मिलती है|

रत्नसिंह-

जैसलमेर के महाराव रत्नसिंह बहुत ही पराक्रमी और साहसी थे| रत्नसिंह के दुर्ग पर खिलजी वंश के शासक अलाउद्दीन ने अपनी सेना के साथ आक्रमण कर दिया था| जिससे कारण ये अत्यधिक चिंतामग्न थे। परन्तु उनकी बहादुर पुत्री रत्नवती ने अपने शौर्य के बल पर दुश्मनों के दांत खट्टे कर दिये| अंततः महाराव रत्नसिंह का दुर्ग पुनः सुरक्षित हो जाता है|

अलाउद्दीन-

अलाउद्दीन के बारे में हम पिछली कहानी वीर बादल में पढ़ चुके हैं| इसलिए यहाँ हम इनके बारे में संक्षेप में जानकारी प्राप्त करेंगे| यह एक यवन शासक था जिसने जैसलमेर के किले को अपने अधीन करने के लिये अनेक प्रकार के जाल बिछाए थे| इस किले को जीतने की चाहत में अलाउद्दीन ने कई बार आक्रमण भी किया परन्तु वह जीत न सका। जबकि यवन सेना और राजपूत सेना दोनों के लाखों लोग मौत के घाट उतर चुके थे|

मलिक काफूर-

यह अलाउद्दीन का एक गुलाम था जो यवन सेना का अधिपति था| इस काफूर ने किले को जीतने के लिये दुर्ग के रक्षकों को अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया परन्तु रक्षकों ने उसके जाल में उन्हीं को फंसा लिया और मलिक काफूर को सैनिकों सहित किले में ही गिरफ्तार कर

लिया गया| मलिक काफ़ूर के सम्बन्ध में अमरेन्द्र कुमार सिंह जी अपनी पुस्तक 'भारत में मुस्लिम साम्राज्य' में लिखते हैं कि- "मार्च 1307 ई. में अलाउद्दीन ने काफ़ूर के अधीन जो अब राज्य का मलिक नायब (सेनाध्यक्ष) कहलाता था, एक सेना देवगिरि के रामचन्द्र देव के विरुद्ध भेजी, क्योंकि उसने पिछले तीन वर्षों से एलिचपुर प्रान्त का कर देना बन्द कर दिया था| साथ-साथ उसने गुजरात के भगौड़े शासक रायकर्णदेव द्वितीय को शरण भी दी थी, ख्वाजा हाजी काफ़ूर का सहायक बना| काफ़ूर मालवा होता हुआ देवगिरि की ओर बढ़ा| उसने सम्पूर्ण देश को उजाड़ डाला, बहुत सा धन लूटा तथा रामचन्द्र देव को संधि करने को लाचार किया|"[21]

मलिक काफ़ूर बहुत ही वीर साहसी तथा अलाउद्दीन का अंग रक्षक भी था| वह अलाउद्दीन के हर कार्य में सहयोग करता था| अलाउद्दीन के साथ में उसने कई राज्यों पर आक्रमण भी किया और सफलता की सीढ़ी को पार करता हुआ सम्राट का प्रिय बन बैठा|

5. रघुपति सिंह-

यह भी एक ऐतिहासिक कहानी है परन्तु इस कहानी के कुछ पात्र काल्पनिक और कुछ ऐतिहासिक हैं| यहाँ पर हम सिर्फ ऐतिहासिक पात्रों का ही उल्लेख करेंगे| प्रमुख पुरुष पात्रों में महाराणा प्रताप, शहंशाह अकबर तथा रघुपति सिंह हैं| यह कहानी एक वीर सैनिक के वीरता पूर्वक लड़े गये युद्धों का वर्णन प्रस्तुत करती है तथा एक ऐसे वीर योद्धा से

परिचय कराती है जिसने अपने जीवन की गंभीर परिस्थितियों में भी अकबर की दासता स्वीकार नहीं किया बल्कि अपने किले और मेवाड़ की सुरक्षा के लिए अपने प्राणों का भी मोह न करते हुए बचाया| ऐसे वीर पुरुष थे मेवाड़ के महाराणा प्रताप|

महाराणा प्रताप-

हिंदू पति महाराणा प्रताप अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध रहे हैं| उन्होंने मेवाड़ की सुरक्षा के लिए कई बार मुगलों से युद्ध किया| जब सम्राट अकबर राजपूत महिलाओं और पुरुषों का अपमान करके उनके साथ गलत आचरण करता था तो ऐसे में महाराणा प्रताप कहाँ चुप बैठने वाले थे? उनके सामने ही अकबर राजपूत पुरुषों और महिलाओं को मौत के घाट उतारा करता था| यह दृश्य भला महाराणा प्रताप कैसे अपनी खुली आँखों से देख सकते थे? वह राजपूत की रक्षा करना अपना धर्म और कर्तव्य समझते थे| राणा प्रताप अपने प्रचंड तलवार और कराली कृपाण से मुगल सैनिकों के सर धड़ से अलग करने लगे परन्तु अन्त में वह मुगल सैनिकों द्वारा घेर लिये गये तब उनके एक वीर सैनिक ने उनका मुकुट और कृपाण लेकर उनसे युद्ध से चले जाने को कहकर स्वयं लड़ने लगा| मुगल उस सैनिक को ही राणा प्रताप समझकर युद्ध करने लगे और राणा प्रताप वहां से निकलकर चले गये| “महाराणा घावों से छिद रहे थे| फिर भी जीवन का मोह छोड़कर दोनों हाथों से तलवार चला रहे थे| एक सरदार प्राणों पर खेलकर वहां तक पहुँचा| महाराणा की

कलगी, काली पगड़ी अपने सिर पर रखी और कहा- अन्नदाता! सेवक बलिदान होता है, आप मेवाड़ को सनाथ रखें| समय की प्रतीक्षा करें| सरदार को समय न था| उसे ही राणा समझ शत्रु उस पर टूट पड़े| शीघ्र ही वह वीरगति को प्राप्त हुआ| राणा आँखों में आंसू भरे लौट आये|"[22]

राणा प्रताप के सम्बन्धों तथा उनके पारिवारिक स्थितियों का वर्णन करते हुए अमरेन्द्र कुमार सिंह जी लिखते हैं कि "जब हम देखते हैं कि बिना राजधानी के अल्प साधनों के साथ उसे मुगल बादशाह की संगठित शक्ति का विरोध करना पड़ा, जो उस समय धरती पर सबसे अधिक और बेहद धनी सम्राट था उसके साथ नायक एवं पड़ोसी तथा उसका सगा भाई तक, जो शूरता एवं स्वतंत्रता के उच्च राजपूती आदर्शों से हीन थे, मुगलों से जा मिले थे। परन्तु राजस्थान का यह राष्ट्रीय वीर जो अपने सम्बन्धियों की अपेक्षा श्रेष्ठतर धातु का बना था, किसी भी बाधा से डरने वाला नहीं था| संकट की विकरालता से प्रताप का साहस और भी दृढ़ होता था|"[23]

शहंशाह अकबर-

शहंशाह अकबर एक मुग़लकालीन सम्राट थे| वे हुमायूँ के पुत्र थे| "प्रबल पराक्रमी, अद्‌वितीय, कूटनीतिज्ञ अकबर का प्रताप-मार्तंड मध्याकाश में चमक रहा था| बाबर की तेज तलवार और हुमायूँ की दया दृष्टि जो न कर सकी थी, अकबर की कूटनीति ने वही कर दिखाया था| यहाँ तक जिस रमणी रत्न के सतीत्व की रक्षा में लाखों राजपूतों ने

अपनी छाती के रक्त से धरती को लाल कर दिया था| उन्हीं रमणियों की डोलियों की भेंट ले- लेकर राजपूत स्वयं अकबर के चरणों में विसर्जन करने लगे थे|"[24]

अकबर इतना शक्तिशाली सम्राट था कि उसके प्रभाव से आतंकित होकर उस समय के वीर राजपूत और रमणियां अकबर की अधीनता स्वीकार कर उसके चरणों में स्वयं को समर्पित करने लगे थे| बड़े-बड़े घरों के लोग सुकुल राजपूत भी अपनी बहन- बेटियों को उसकी अंकशायिनी बनाकर अपने को कृतार्थ समझने लगे थे, क्योंकि राणा प्रताप के पिता उदयसिंह अयोग्य थे तथा शासन सम्बन्धी व्यवस्था को ठीक से संचालित न कर सके थे। जिसके कारण मेवाड़ की राज्यश्री फीकी और रोग ग्रस्त की तरफ बढ़ती गयी| इसी स्थिति में मेवाड़ के मस्तक पर महाराणा प्रताप की प्रतिष्ठा हुई| मेवाड़ की गद्दी पर सिन्हासनारुढ़ होते ही महाराणा प्रताप का हृदय, अकबर की इस क्रूरता से पिघलने लगा और राजपूतों की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष करने की योजना बनाई| इस समय राजपूतों की स्थिति बिगड़ती जा रही थी- "बड़े-बड़े सम्राट, सुकुल राजपूत अपनी-अपनी बहन-बेटियों को बादशाह की अंकशायिनी बनाकर अपने को धन्य समझने लगे थे| अभी तक राजपूतों की राज्यश्री, धन, संपत्ति ही मुगलों के चरणों में आयी थी - अब उनकी प्रतिष्ठा, आबरू यहाँ तक कि उनकी गृह लक्ष्मियां यवनों के पर्यंक की शोभा को बढ़ाने लगी|"[25]

इस प्रकार अकबर और महाराणा प्रताप के बीच हल्दी घाटी के मैदान में कई बार युद्ध हुआ| दोनों ओर की सेना गाजर-मूली की तरह कटने लगीं और चारों तरफ हाहाकार मच गया| राणा प्रताप अपनी छोटी सी सेना की टुकड़ी लेकर मुगल सेना से बराबर लड़ते रहे परन्तु हार कभी नहीं मानी| **कर्नल टाड के अनुसार-** "मुगल साम्राज्य का अकबर ही वास्तविक संस्थापक था| वही प्रथम सफल विजेता था जिसने राजपूतों की स्वतंत्रता नष्ट कर दी... उसने लोगों को जंजीरों से जकड़ा, किन्तु उनके ऊपर सोने का मुलम्मा चढ़ा दिया|"[26]

अकबर बादशाह को यह अच्छी तरह मालूम था कि राजपूतों से यदि शत्रुता रखी गयी तो कभी भी स्थाई साम्राज्य की स्थापना नहीं की जा सकती| अतः वह उन्हें अपने साथ मिलाकर रखना चाहता था ताकि राजपूतों के सहयोग से अपनी राजनीतिक एवं सामाजिक एकता स्थापित कर सके| अकबर की नीति की निम्नलिखित विशेषताएं थी-

1-शहंशाह अकबर ने राजपूत स्त्रियों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध बनाए|

2- जो राजपूत अकबर की अधीनता स्वीकार कर लेते थे उन्हें अकबर उच्च पद पर बैठाना शुरू किया|

3- अकबर ने राजपूतों के रीति-रिवाज, खान-पान, धर्म एवं सामाजिक कार्यों में हस्तक्षेप नहीं किया|

6. भिक्षु राज:

आचार्य शास्त्री जी की यह एक सर्वाधिक प्रसिद्ध ऐतिहासिक कहानी है| प्रमुख पुरुष पात्रों में संघमित्रा, आचार्य उपगुप्त, सम्राट अशोक के पुत्र महेंद्र कुमार सिंह, लक्षद्वीप के राजा तिष्य, तिष्य के छोटे भाई उत्तिय और उनकी पत्नी अनुला हैं| यहाँ पर प्रमुख पुरुष पात्रों का विवेचन किया जाता है-

आचार्य उपगुप्त-

ये सम्राट अशोक के आचार्य थे जिन्होंने सम्राट को बौद्ध धर्म की दीक्षा दी थी| इन्हीं आचार्य के आदेशानुसार राजकुमार महेंद्र और राजकुमारी संघमित्रा सिंहलद्वीप में भिक्षु वृत्ति ग्रहण कर बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ गए थे|

राजकुमार महेंद्र-

ये ससागरा धरती के यशस्वी सम्राट अशोक के पुत्र थे| सम्राट अशोक बहुत ही प्रिय और सबसे प्रसिद्ध राजनीतिक व्यक्तित्व के थे, उनकी वीरता की दास्तान पूरे मौर्य वंश में सुनाई पड़ती थी| तत्कालीन सभी राजा सम्राट अशोक से भयभीत रहते थे| जैसा कि रणवीर चतुर्वेदी जी इनके शासन काल के प्रभाव के सम्बन्ध में अपनी पुस्तक 'भारतीय इतिहास का आदिकाल' में लिखते हैं कि- "मौर्य वंश का तृतीय शासक और बिन्दुसार का पुत्र अशोक निःसंदेह इस परिवार में सबसे प्रसिद्ध राजनीतिक व्यक्तित्व का था| उसका राज्यकाल चार दशकों तक रहा|

शासनकाल की लम्बाई की दृष्टि से ये चार दशक अभूतपूर्व नहीं हैं, क्योंकि भारतीय इतिहास में इतने या इससे अधिक समय तक शासन करने वालों के उदहारण हैं, किन्तु महत्व की दृष्टि से अशोक का शासन काल लगभग अद्वितीय है| चार दशकों के इतिहास पर विचार करने के लिये सर्वाधिक प्रामाणिक साधन उसके अपने अभिलेख हैं|"[27]

राजकुमार महेंद्र अपनी बहन संघमित्रा और 12 बौद्ध भिक्षुओं के साथ सिंहलद्वीप में बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार करने के लिये गए थे| आचार्य जी ने उस समय के बौद्ध भिक्षुओं के वस्त्रों एवं उनके शारीरिक सौन्दर्य का वर्णन प्रस्तुत कहानी में किया है- "उनके वस्त्र पीत वर्ण थे और सिर मुंडित प्रत्येक के आगे एक भिक्षा पात्र धरा था| उनके पैरों में काष्ठ की पादुकाएं थीं|"[28]

महेंद्र कुमार आचार्य की इच्छा से अत्यधिक दूर सिंहलद्वीप में जाकर अपनी बहन तथा 12 बौद्ध भिक्षुओं के साथ समस्त सिंहलद्वीप को महात्मा गौतम बुद्ध के उपदेशों से अवगत कराते हैं| ये अत्यंत वीर और साहसी थे| मार्ग की समस्त बाधाओं और दुखों को दरकिनार करते हुए तथा सभी बौद्ध भिक्षुओं का मनोबल बढ़ाते हुए उस अपरिचित स्थान पर 48 वर्ष तक बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार किया| ये संसार के समस्त भोग-विलासों तथा अनुचित कार्यों से दूर रहे| जन-जन को हमेशा सत्य, , ज्ञान, तप आदि के बारे में बताते रहे| धीरे-धीरे समस्त सिंहलद्वीप महेन्द्र कुमार द्वारा दिए गए उपदेशों से लाभाविन्त

होकर सत्य अहिंसा के मार्ग पर अविराम गति से निकल पड़ा| 80 वर्ष की आयु में बोधि-वृक्ष के पास महाकुमार महेन्द्र की सिंहलद्वीप की ही पुण्य भूमि पर मृत्यु हो गई| उनकी मृत्यु के बाद उत्तिय राजा ने शव को चन्दन की लकड़ी पर रखकर स्वयं अपने हाथों से आग लगाई| चिता जल जाने के उपरान्त राख का आधा भाग चैत्य पर्वत पर महिंतेल में ले जाकर गाड़ दिया। शेष भाग को सभी बौद्ध विहारों और प्रमुख स्थानों में गाड़ने के लिये भेज दिया- "जिस स्थान पर महाकुमार का शव-दाह हुआ था, वह स्थान अब भी भूमांगन अर्थात पवित्र भूमि कहाता है और तब से अब तक उस स्थान के इर्द-गिर्द 25 मील के घेरे में जो पुरुष मरता है, यहीं अन्तिम संस्कार के लिये लाया जाता है| इस राज भिक्षु ने जिन-जिन गुफाओं में निवास किया था, वे सभी महेन्द्र गुफा कहाती हैं| अब भी चट्टान में कटी हुई एक छोटी गुफा को 'महेंद्र की शय्या' के नाम से पुकारते हैं|"[29]

आज भी वर्ष के हर दिन खासकर पौष की पूर्णिमा को अधिकांश तीर्थ यात्री उसी महिंतेल पर चढ़ते दिखाई देते हैं|

तिष्य-

यह सिंहलद्वीप के महाप्रतापी राजा थे| जब इन्हें मालूम हुआ कि कुछ बौद्ध-भिक्षु उनके द्वीप में आये हैं तब इन्होंने अपने महल में सभी भिक्षुओं को बुलाकर उनसे महात्मा बुद्ध द्वारा दिये गये उपदेशों को सुना। जिसके पश्चात् राजा के अन्तर्मन से छल-कपट, कूटनीति, ईर्ष्या, द्वेष इत्यादि भावनाएं तत्क्षण दूर हो गईं| इनके चक्षु-नेत्र के पटल खुल गये| अपने राज्य में भी इसके प्रचार-प्रसार को अत्यंत बढ़ावा दिया| समस्त सिंहलद्वीप महेन्द्र कुमार की बातें सुनकर बौद्ध- भिक्षु बन गये| राजा तिष्य ने महेन्द्र कुमार सहित सभी भिक्षुओं के लिए गुफाओं का निर्माण कराया|

उत्तिय-

यह महाराजा तिष्य के छोटे भाई थे, जिन्हें राजा के मृत्योपरान्त राजसिंहासन की गद्दी मिली थी| इन्होंने ही राजकुमार महेन्द्र के मृत्योपरान्त उनके मृत शरीर को चन्दन की लकड़ी पर रखकर जलाया था| बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में इनका भी महत्वपूर्ण योगदान था| ये एक ऐसे परम वीर राजा थे जिन्होंने अपनी पत्नी को भी बौद्ध भिक्षुओं के साथ भिक्षुवृत्ति ग्रहण कर बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ एवं जनमानस के कल्याणार्थ भेजा था|

7. चौथी भांवर:

जैसा की सर्व विदित है कि राजपूतों को यदि अपनी प्रतिष्ठा, सम्मान और अधिकार के लिये उन्हें तलवार भी उठाना पड़ता था तो वे कभी पीछे नहीं हटते थे| तलवार की नोंक पर खेलना उनके वीरता का चिन्ह माना जाता था| वे किसी भी युद्ध या विवाह मण्डप में विवाह करने और भांवर लेने के लिए चाहते थे तो तुरन्त अपनी तलवार के बल पर आक्रमण कर देते एवं अपनी पसंद की कन्या का हरण कर लेते थे| यह कहानी ऐसे वीर राजपूतों की गाथा को वर्णित करती है|

वीरपाल देव-

ये गुर्जराधिपति थे जो बहुत ही वीर, साहसी तथा धैर्यशाली राजा थे| इनका कुल 10 विवाह हो चुका था और ग्यारहवें विवाह का आयोजन चल रहा था, उनके विवाह में नगर, गली, बाज़ार आदि को चारों तरफ से सजाया गया था| जैसा कि शास्त्रीजी ने इस सजावट का वर्णन करते हुए लिखा है कि "प्रभासपट्टन के गली, कूंचे, बाज़ार, घर-बार तोरण और पताकाओं से सजाए गए थे| राजप्रासाद के गगन-चुम्बी स्वर्ण कलशों पर नया निखार था| बसंत की कम्पित वायु उन्मत्त प्राणों को झकझोरती हुई प्रकृति की ओर से उस राज्यश्री की वृद्धि कर रही थी| सब सैनिकों को और राज्य- वर्गीयों को नये वस्त्र बांटे गये थे| राजप्रासाद के तोरण पर

अनेक प्रकार के बाजे बज रहे थे और सब कार्य विधि-विधान से सम्पन्न हो रहे थे|"[30]

इसके पहले महाराज की शादी लीलावती से हुई थी| इस वक्त महाराज की उम्र 60 वर्ष के पार हो चुकी थी और वे अपनी ग्यारहवीं शादी का जश्न मनाने की तैयारी में लगे थे| वे वीर और साहसी होने के साथ-साथ कुशल राजनीतिज्ञ भी थे| अपने भाई भीमसिंह देव की सहायता से गहलौत कन्या को युद्ध में जीता था| गाँव, नगर, धन- दौलत के साथ-साथ उन्होंने संधि की शर्तों में गहलौत कन्या को भी मांग लिया था। जिसके कारण उनके ग्यारहवें विवाह की तैयारी चल रही थी|

भीमसिंह देव-

भीमसिंह देव गुजरात राज्य के उत्तराधिकारी तथा गुर्जराधिपति वीरपाल देव के भाई थे। जिन्होंने अपनी शक्ति और पराक्रम के बल पर राजा वीरपाल के गहलौत राज्य को विजित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई| भीमसिंह देव की शक्ति का प्रचार पूरे गुजरात राज्य के साथ-साथ अन्य राज्यों तक फैला था| आबू के पंवार राजा विजयपाल सिंह जो कि महाराज वीरपाल देव की शादी में आए थे| जब उपहार देने का समय आया तो उन्होंने हीरे की अंगूठी घर पर भूल जाने की बात कही जिसके फलस्वरूप भीमसिंह देव तुरन्त उनके घर पर हीरे की अंगूठी लेने जाते हैं। वहां पर उनकी आँख विजयपाल सिंह की पुत्री इच्छिनी से टकरा जाती

है| वे उस पर मोहित हो जाते हैं और उससे अपने प्रेम का इजहार करते हैं, लेकिन वह कन्या कहती है कि यदि तुम मुझसे प्यार करते हो तो मुझे मांगकर नहीं बल्कि मेरा हरण करके ले जाओ| कुछ दिनों के पश्चात भीमसिंह को पता चलता है कि राज कुमारी इच्छिनी का विवाह दिल्लीपति पृथ्वीराज के साथ होना निश्चित हुआ है| तब वे तुरन्त उसके पास जाते हैं और इच्छिनी से कहते हैं कि मैं तुम्हें लेने आया हूँ, तुम मेरे साथ चलो, लेकिन इच्छिनी भी एक राजकुमारी थी, उसका मानना था कि जब तक तुम मुझे हरण करके नहीं ले जाओगे तब तक मैं तुम्हारे साथ नहीं जा सकती| भीमसिंह देव राजपूत तो थे ही उन्होंने तुरन्त वीरपाल के पास सन्देश भेजा कि जिस दिन इच्छिनी का विवाह दिल्लीपति पृथ्वीराज से होगा उसी दिन मैं उसे हरण करके ले जाऊँगा। तुम्हारे और पृथ्वीराज के पास यदि हिम्मत हो तो मुझे रोक लेना| ये वाक्य थे गुजरात के एक भावी महाराज भीमसिंह देव के|

लेखक ने इस कहानी में भीमसिंह देव की वीरता और साहस को दिखाने का प्रयास किया है| एक राजा किसी कन्या को हरण करने की बात उसके पिता के सामने करता है वह भी तब जब कन्या किसी की वागदत्ता हो चुकी हो| भीमसिंह देव को जब पता चला कि आगामी चतुर्दशी को राजकुमारी इच्छिनी का विवाह है तो वे उस दिन का बेसब्री से इंतज़ार करने लगे| मगर वह घड़ी आने में उन्हें पल- पल की देरी लग रही थी। जैसा कि कहा जाता है- सुख की घड़ी तुरन्त कट जाती है परन्तु

दुःख की घड़ी दिनों-दिन लम्बी होती जाती है| यह बिलकुल सत्य है, क्योंकि गुजरात के भावी राजा भीमसिंह देव को अब एक भी क्षण इंतजार करना दुर्भर हो रहा था| आखिर वह दिन भी आया और भीमसिंह ने अपनी समस्त सेनाओं और शस्त्रों के साथ आबू पर आक्रमण कर दिया| चारों तरफ लाशों के ढेर इकठ्ठा होने लगे| खून की नदियाँ बह चलीं "किले में विवाह मण्डप सजा था और उसके आस-पास चौधारी तलवार बज रही थी| रुंड मुंड लोट रहे थे| कान्ह का दुधारा चौमुहरी मार कर रहा था| जीवन और मृत्यु खुला खेल, खेल रहे थे| मंगल वाद्य उन्मुख तैयार थे| वधू-विवाह वस्त्र पहने तैयार थी; परन्तु कौन वर इसे प्राप्त होगा, यह कहा नहीं जा सकता था| देखते- देखते लाशों का तूमार बंध गया|"[31]

इस प्रकार से भयंकर युद्ध का आगाज हो गया और चारों तरफ हाहाकार मच गया तथा एक रानी को पाने के लिए न जाने कितनी लाशें बिछ गईं| पृथ्वीराज भी अपनी सेना के साथ युद्ध कर रहे थे उनकी भी तलवार दुश्मनों के सर, धड़ से अलग कर रही थी| इधर भीमसिंह अपनी पूरी शक्ति के साथ युद्ध में अपना प्रदर्शन कर रहे थे, परन्तु अन्त में राजकुमारी इच्छिनी को जीत न सके और राजकुमारी दिल्लीपति पृथ्वीराज की हो गई|

8. सोया हुआ शहर:

'सोया हुआ शहर' कहानी में यदि पुरुष पात्रों की बात की जाये तो सर्वप्रथम बादशाह अकबर का नाम आता है जिसने अपनी राजधानी आगरा को बनाया था| अकबर की मृत्यु के पश्चात उसके पुत्र जहाँगीर ने मुगल तख़्त को सम्भाला और साम्राज्य विस्तार किया| जहाँगीर का स्वभाव तो नर्म दिल था परन्तु वे अत्यंत लापरवाह बादशाह थे| वे कुछ सनकी स्वभाव के थे तथा अपने राज-काज को सम्भालने में अति सक्रिय नहीं रहते थे| धीरे-धीरे साम्राज्य का पतन प्रारम्भ होने लगा| यह देख कर नूरजहाँ ने साम्राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले लिया और अपने हिसाब से राज्य का शासन प्रबन्ध करने लगी| जहाँगीर अक्सर मदिरा तथा भोग-विलास में ही मदमस्त रहता था तथा राजकाज की तनिक भी चिंता न करता था|

9. प्रतिदान:

यह कहानी सम्राट हर्षवर्धन के जीवन तथा उनके द्वारा दिये गए महादान या प्रतिदान पर आधारित है| इस कहानी में सम्राट हर्षवर्धन के गुणों, धर्मों, त्याग, बलिदान तथा जनता के प्रति समर्पण भावना को व्यक्त किया गया है|

हर्षवर्धन-

सम्राट हर्षवर्धन एक भारतीय सम्राट थे जिनका सम्बन्ध पुष्यभूति परिवार से था| हर्षवर्धन के जन्म की बात की जाये तो इनका जन्म 580 ई. के लगभग माना जाता है| इनके पिताश्री का नाम प्रभाकर वर्धन था जो कि वर्धन वंश के संस्थापक थे| सम्राट हर्षवर्धन ने अपने राज्य का चतुर्मुख दिशाओं में विकास किया था| पंजाब, पश्चिम बंगाल और उड़ीसा तथा नर्मदा नदी के उत्तर में समस्त भारत गंगा के मैदान को विस्तारित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी| इनके बड़े भाई राज्यवर्धन थे जिनकी हत्या गौड़ के राजा शशांक ने कर दिया था| राज्यवर्धन की मृत्यु के पश्चात ही इन्होंने गद्दी संभाली| जिस समय इन्होंने अपने साम्राज्य की बागडोर अपने हाथों में लिया उस समय उनकी उम्र मात्र 16 वर्ष की थी| गद्दी पर बैठने के बाद इन्होंने अपनी राजधानी कन्नौज बना ली| हर्षवर्धन एक धर्म निरपेक्ष शासक थे| वे सभी धर्मो और धार्मिक भावनाओं का सम्मान किया करते थे| वह अपने जीवन के प्रारम्भिक दिनों में सूर्य की उपासना करते थे परन्तु बाद में शैववाद तथा बौद्ध धर्म के बहुत बड़े अनुयायी बन गये| एक चीनी यात्री ह्वेनसांग(जिसने हर्षवर्धन के राज्य का दौरा 630 ई. में किया था) के अनुसार हर्षवर्धन ने कई बौद्ध स्तूप बनवाए थे| रामशरण शर्मा ने अपनी पुस्तक 'भारत का प्राचीन इतिहास' में हर्ष के शक्तियों और साम्राज्य विस्तार का वर्णन करते हुए लिखा है कि "हर्ष को भारत का अन्तिम

महान हिन्दू सम्राट कहा जाता है लेकिन वे न तो एक कट्टर हिन्दू थे न ही पूरे देश के शासक| उनका अधिकार कश्मीर को छोड़कर उत्तर भारत तक सीमित था| राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा उनके प्रत्यक्ष नियंत्रण में थे, लेकिन उनका प्रभाव बहुत व्यापक क्षेत्रों तक था| ऐसा लगता है कि सीमावर्ती राज्यों ने उनकी सम्प्रभुता स्वीकार कर ली थी| पूर्वी भारत में उन्होंने गौड़ के शैव राजा शशांक से सामना किया जिसने कि बोधगया में बोधि-वृक्ष को काट कर गिरा दिया था|"[32]

उत्तर भारत में सम्राट हर्षवर्धन ने बौद्ध धर्म को फिर से जागृत करने का प्रयास किया और अपने दरबार में भी अनेक बौद्ध धर्म से सम्बन्धित क्रिया कलाप करवाया| नालंदा विश्वविद्यालय को अधिक बढ़ावा भी दिया| हर्षवर्धन के दरबार में जयसेन रहते थे जो बौद्ध धर्म के सबसे प्रसिद्ध अनुयायी एवं महान उदार व्यक्तित्व के थे| जयसेन हमेशा दूसरों की मदद करते थे| वह एक भिक्षुक की तरह जीवन यापन करना चाहते थे| एक बार सम्राट ने अस्सी गाँवों का कर उन्हें दान में देने के लिये कह दिया क्योंकि वे उनके सद्धर्म सेवा भावना से प्रसन्न रहते थे। परन्तु एक भिक्षुक इतना सारा कर लेकर क्या करता| सभी लोग अचम्भित थे कि जयसेन इस धन का क्या करेंगे तभी जयसेन ने खड़े होकर मौन स्वर में सम्राट हर्षवर्धन से कहा- "सम्राट आपकी धर्म में जैसी रुचि है और जैसा आपका यश है, वैसा ही यह महादान आपने मुझ अकिंचन को मेरी धर्म सेवा एवं अक्षर ज्ञान के उपलक्ष्य में दिया है| इस

उदार दान ने आपको महान अशोक के समकक्ष बना दिया है, परन्तु सम्राट! मुझ भिक्षुक को इतने धन का क्या करना है? मुझे वर्ष में दो बार वस्त्र और प्रतिदिन एक बार ग्यारह अंजलि अन्न चाहिए| इतना तो श्रद्धालु नागरिक मुझे अनायास ही भिक्षा दे देते हैं| फिर आपका यह धन निरर्थक क्यों रहे? धनराशि की आवश्यकता तो आपके जैसे सम्राटों को होती है| जैसे विद्वान अपनी विद्या द्वारा मनुष्यों का कल्याण करते हैं, उसी तरह सम्राटों को धन द्वारा करना चाहिए|”[33]

यह सुनकर सम्राट हर्षवर्धन का बौद्ध विद्या महारथी महापण्डित जयसेन के प्रति आकर्षण और बढ़ गया| कितनी अच्छी विचारधारा है जयसेन की| अपने समस्त सुखों का त्याग करते हुए उन्होंने कितनी सहजता से यह संपत्ति लेने से मना कर दिया। वस्तुतः यदि देखा जाय तो इतना धन-संपत्ति प्राप्त करने के लिए व्यक्ति क्या नहीं कर सकता है? सम्राट हर्षवर्धन, जयसेन की इस भावना से प्रसन्न होकर उस धन को खर्च करने के विषय में उनसे कहते हैं कि “पण्डितवर, आपका त्याग मेरे दान से बहुत बढ़कर है| आपकी चरणधूलि मेरे मस्तक की शोभा है| अब आप ही बताइये कि आपके इस त्याज्य धन का क्या उपयोग किया जाये?”[34]

अर्ध ऐतिहासिक पात्र :

आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने ऐतिहासिक कहानियां तो बहुतायत में लिखी हैं परन्तु कुछ कहानियां अर्ध ऐतिहासिक कहानियों के अन्तर्गत आती हैं- जिसमें या तो पात्र ऐतिहासिक हैं और घटनाएं काल्पनिक हैं अथवा घटनाएँ वास्तविक हैं और पात्र काल्पनिक हैं| कुछ कहानियों के पात्र ऐतिहासिक हैं तो कुछ के अर्ध ऐतिहासिक। जैसे-: दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी, लालारुख, ताज इत्यादि| यहाँ पर हम कुछ अर्ध ऐतिहासिक कहानियों के पुरुष पात्रों का वर्णन करेंगे|

1- दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी-

आचार्य शास्त्री द्वारा लिखित यह कहानी सम्भवतः सबसे अधिक प्राचीन कहानी मानी जा सकती है जो सन् 1917 ई. के लगभग लिखी गई थी| यह मुगलकाल से सम्बन्धित अत्यंत रोचक कहानी है, जिसमें मुगल शासक शाहजहाँ और उनकी बेगम सलीमा के प्रेम सम्बन्धों को दर्शाया गया है| इस कहानी में प्रमुख पुरुष पात्रों में शाहजहाँ है|

शाहजहाँ-

मुगल सम्राट शाहजहाँ का जन्म 5 जनवरी 1592 ई. में लाहौर के पाकिस्तान में हुआ था| तथा मृत्यु का समय 22 जनवरी 1666 ई. में माना जाता है| शाहजहाँ की कई पत्नियाँ थीं, परन्तु इस कहानी में आचार्य जी ने शाहजहां की पत्नी का नाम 'सलीमा' दिखाया है तो वही

अमरेन्द्र सिंह जी की पुस्तक 'भारत में मुस्लिम साम्राज्य' में शाहजहां की पत्नी का नाम 'सलीमा बानू' दिखाई पड़ता है। शाहजहां की कुछ जीवन संगिनियों के नाम इस प्रकार हैं- कन्दाहरी बेगम, अकबर बांदी महल, मुमताज महल, मुति बेगम, हसीना बेगम इत्यादि| शाहजहाँ के पिता का नाम जहाँगीर था| जहाँगीर की मृत्यु के पश्चात् छोटी उम्र में ही उन्हें मुगल सिंहासन का उत्तराधिकारी बनाने की जद्दोजहद हुई और अन्ततः उन्हें छोटी उम्र में उत्तराधिकारी बना दिया गया| सन् 1627 ई. में वे अपने पिता की मृत्यु के बाद गद्दी पर बैठे| उनके शासनकाल की बहुत सराहना की जाती है और मुगल शासन का स्वर्णयुग भी माना जाता है।

भारतीय सभ्यता का सबसे समृद्ध काल भी कहा जाता है| शाहजहाँ अपने साम्राज्य में अपनी कुशल न्यायप्रियता और वैभव विलास की वजह से अत्यधिक लोकप्रिय रहे। यद्यपि इतिहास में यदि देखा जाये तो शाहजहां का नाम केवल इस कारण नहीं लिया जाता बल्कि उसका नाम एक आशिक के तौर पर जाना जाता है, जिसने अपनी खूबसूरत और प्राणप्रिय बेगम मुमताज महल के लिये, विश्व भर में सबसे खुबसूरत ताजमहल बनवाने का प्रयत्न किया| जैसा कि इतिहासकार भी शाहजहाँ के शासन काल के सम्बन्ध में लिखते हैं कि-"शाहजहाँ 1628 ई. में तख़्त पर बैठा| शहजादे के रूप में दकन में दो अभियानों का नेतृत्व कर चुकने और अपने पिता के खिलाफ विद्रोह के दौरान दकन में अच्छा ख़ासा

समय बिताने के बाद शाहजहाँ को दकन और उसकी राजनीति का काफी कुछ अनुभव और निजी ज्ञान हो चुका था|"[35]

प्रस्तुत कहानी में पुरुष पात्र शाहजहाँ का वर्णन करते हुए आचार्य जी ने लिखा है कि शाहजहाँ ने गर्मी के महीने अर्थात फाल्गुन में सलीमा से विवाह किया था। जैसा कि आज भी विवाह के पश्चात् पति - पत्नी कहीं न कहीं घूमने या दर्शन करने अवश्य जाते हैं, ठीक उसी प्रकार शाहजहाँ भी अपनी बेगम सलीमा को साथ लेकर कश्मीर के दौलत खाने में सैर करने के उद्देश्य से जाते हैं या यूं कह ले कि वे प्रेम और आनन्द की कल्लोल करने के लिए चले गये थे| वहीं पर मोती महल के एक कमरे में उनका निवास था| एक बार शाहजहाँ दो दिन के लिये शिकार पर चले जाते हैं और सलीमा तथा उसकी बांदी कमरे में ही रहती हैं| जिस कमरे में वे रहते थे उसका अत्यंत सौन्दर्यात्मक वर्णन शास्त्री जी प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि "कमरे में एक कीमती ईरानी कालीन, फर्श पर बिछा हुआ था जो पैर रखते ही हाथ भर नीचे धंस जाता था| सुगन्धित मसाले से बने शमदान जल रहे थे| कमरे में चार पूरे कद के आईने लगे थे| संगमरमर के आधारों पर, सोने चांदी के फूलदानों में ताजे फूलों के गुलदस्ते रखे थे| दीवारों और दरवाजों पर चतुराई से गुंथी हुई नागकेसर और चंपे की मालाएँ झूल रही थीं जिनकी सुगन्ध से कमरा महक रहा था| कमरे में अनगिनत महुमूल्य कारीगरी की देश-विदेश की वस्तुएं करीने से सजी हुई थी|"[36]

मोतीमहल के इस कमरे में शाहजहाँ की बेगम सलीमा और उसकी दासी साकी जिसे (बांदी) भी कहा जाता है, साथ में रहती थी| जब शाहजहाँ दो दिन के लिये शिकार पर चले जाते हैं तो बेगम सलीमा का दिल घबराने लगता है| एक दिन तो किसी तरह वे काट लेती हैं, पर अगले दिन उनकी बेचैनी अत्यधिक बढ़ जाती है और वह अकेलापन उन्हें मानो खाने को दौड़ता है| शाहजहाँ की याद में उसकी आँखों से नींद उड़ चुकी थी| उस दिन सलीमा खुलकर जीने का मन बनाती है और बांदी से कहती है! आज तू मुझे कुछ गा कर सुना और उससे शरबत पीने के लिए मांगती है पर साकी ने उस शरबत में गुलाब के साथ इस्तम्बोल भी मिला देती है, जिसके प्रभाव से सलीमा बेसुध होकर जमीन पर गिर जाती है|

वह बांदी उसके इस बेसुध शरीर को देखकर पहले तो घबराती है परन्तु तत्क्षण मौका देख उसके होंठो को चूम लेती है तभी शाहजहाँ अचानक आ पहुँचते हैं और उसके इस क्रूर कृत्य के लिए उसे कारागार में डलवा देते हैं| बादशाह जब उसे सलीमा को चूमते हुए देख लेते हैं तो उस बांदी से पूछते हैं कि तुम कौन हो? और यह क्या कर रही थी? तो बांदी बड़े गर्व के साथ जवाब देते हुए कहती कि मैं मर्द हूँ| यह सुनकर बादशाह की आँखों के सामने अँधेरा छा जाता है और वे क्रोधित होकर तत्काल तलवार निकाल लेते हैं- “साकी ने अकम्पित स्वर में कहा- मैं मर्द हूँ| बादशाह की आँखों में सरसों फूल उठी| उन्होंने अग्निमय नेत्रों से सलीमा

की ओर देखा| वह बेसुध पड़ी सो रही थी| उसी तरह उसका भरा यौवन खुला पड़ा था| उनके मुंह से निकला उफ़, फाहशा! और तत्काल उनका हाथ तलवार की मूठ पर गया| फिर दोजख के कुत्ते| तेरी यह मजाल|"[37]

शाहजहाँ को पूरा यकीन हो जाता है कि सलीमा बेगम का उस बांदी के साथ गैर सम्बन्ध है| तत्पश्चात क्रोधित होकर शाहजहाँ उस साकी को कैदखाने में डाल देतें हैं और सलीमा को भी कमरे से बाहर निकलने पर रोक लगा देते हैं| अन्ततः सलीमा निराश होकर अपने प्राण त्याग देती है और शाहजहाँ उसके शोक में उसी कमरे की खिड़की से रात-दिन उसकी कब्र को देखते हुए यही गाना गाते हैं कि- दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी........

शाहजहाँ एक वीर एवं साहसी बादशाह थे जिनकी वीरता की छाप पूरी दिल्ली सल्तनत पर स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती थी| प्रस्तुत कहानी में मात्र एक शक के कारण शाहजहाँ ने सलीमा को मरने के लिए मजबूर कर दिया था| शास्त्री जी शायद यही सीख देना चाहते हैं कि क्रोध में आकर मनुष्य अंधा हो जाता है उसे पहले सही और गलत की पहचान कर लेना चाहिए, उसके बाद ही कोई ठोस कदम उठाना चाहिए। बिना जाँच परख के सही निर्णय पर नहीं पहुँचा जा सकता है|

2- लाला रुख-

इस कहानी में एक ऐसे पुरुष का वर्णन किया गया है जिसने लाला रुख को अपना बनाने के लिए न जाने कितने प्रयास किये पर बड़ी मसक्कत के बाद उसे लाला रुख का प्रेम मिलता है| इस कहानी के पुरुष पात्रों में इब्राहिम ही सबसे प्रमुख पात्र के रूप से उभरकर सामने आता है|

इब्राहिम-

यह बुखारे के शहजादे थे जिनका ब्याह दिल्ली के आलमगीर की सबसे दुलारी छोटी शाहजादी लालारुख के साथ तय हुआ था| मगर इब्राहिम ने शहजादी का इस्तकबाल दिल्ली के बजाय कश्मीर के दौलताबाद में करने के लिए लाला रुख के पिता आलमगीर से मंजूरी ले ली थी| आचार्य जी ने इन्हें एक शहजादा, कवि, शायर इत्यादि गुणों से युक्त चित्रित किया है| ये क्षमाशील और अत्यंत कर्तव्य परायण शहजादे थे| इन्होंने लाला रुख से मिलने के लिये, उसकी यादों की बैचेनी को दूर करने के लिये, विरह की अग्नि को शांत करने के लिये उसके पड़ाव पर ही एक कवि और शायर बनकर चले जाते हैं और वहीं पर दोनों एक दूसरे को देखकर मोहित हो जाते हैं| शहजादी भी उस अनजान व्यक्ति को अपना दिल दे बैठती है जबकि उसको ये नहीं पता होता है कि वह अमुक कवि, शायर ही इब्राहिम शहजादा है| धीरे-धीरे जब वह कश्मीर के दौलताबाद में पहुँचती है तो उसका मन इब्राहिम से मिलने के लिये नहीं

होता परन्तु लाला रुख के पिता आलमगीर ने तो इब्राहिम से ही मिलने के लिये अपनी पुत्री को भेजा था|

लाला रुख एक ऐसे दो मुहाने पर खड़ी थी कि वह क्या करे उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था। यदि वह पिता की बात माने तो इब्राहिम को तो प्राप्त कर लेगी परन्तु वह जिसे अपना प्रेमी बना चुकी थी, उस कवि या शायर को कैसे भुला पाती| यदि वह पिता के आदेशानुसार कार्य न करके उनसे नहीं मिलती है तो यह शहजादे इब्राहिम का अपमान होगा| अतः वह यह सोच कर इब्राहिम से मिलने जाती है कि वह सब कुछ उन्हें सच-सच बता देगी| वह इब्राहिम को बता देगी कि वह किसी और से प्यार करती है। तत्पश्चात वह बुखारे के शहजादे इब्राहिम के पास पहुँचती है और उनको देखे बिना ही उनके चरणों में लोटकर प्रणाम करती है और क्षमा याचना करती है। परन्तु जब वह देखती है कि सामने शहजादे के रूप में वही व्यक्ति है, जिससे रास्ते में ही उसे प्रेम हो गया था तो वह इतना अधिक प्रसन्न हो जाती है कि वहीं बेसुध होकर जमीन पर लुढ़क जाती है।

काल्पनिक पात्र

आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने अपनी कहानियों में ऐतिहासिक, सामाजिक, मुगलकालीन, बौद्धकालीन, राजपूती परक इत्यादि सभी प्रकार की कहानियों के साथ-साथ बहुत सी काल्पनिक कहानियां भी लिखीं हैं। इन काल्पनिक कहानियों में मानव समाज की झांकी प्रस्तुत हुई

है। साथ ही साथ परिवारों के मध्य कैसे सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है, समाज में हो रहे अत्याचारों का पर्दाफाश तथा उनसे छुटकारा पाने के भी तरीके बताये गये हैं| काल्पनिक कहानियों के माध्यम से हमें जीवन जीने के नये-नये तरीके तथा अपने घर-परिवार एवं समाज को खुशहाल बनाने हेतु विभिन्न प्रकार की प्रेरणात्मक बातों का भी वर्णन किया है| यहाँ पर शास्त्री जी की कुछ महत्वपूर्ण काल्पनिक कहानियों की चर्चा की जा रही है। उन कहानियों का हमारे सांस्कृतिक जीवन में क्या मूल्य है और किस प्रकार हमारे भविष्य के निर्माण में वे सहायक हैं, उन सभी आवश्यक बातों का यथास्थान वर्णन किया जाता है|

1- मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ -

यह कहानी आचार्य जी ने सन् 1915-16 ई. के लगभग लिखी थी| इस कहानी में कहानीकार ने एक गांव के गरीब परिवारों की पारिवारिक प्रेम-भावना को अपनी लेखनी के माध्यम से व्यक्त किया है| इस कहानी के पुरुष पात्रों में मुख्य पात्र बंशी है| हम यहाँ पुरुष पात्र के रूप में बंशी के व्यक्तित्व की झांकी प्रस्तुत करेंगे| वह किस प्रकार से अपने बचपन के प्रेम को अपनी जवानी की समाप्ति तक बरकरार रखता है? उस प्रेम का तथा उसके सच्चे प्रेम की अति दयनीय दशा का भी उल्लेख करेंगे|

बंशी -

प्रस्तुत कहानी में बंशी एक ऐसा पात्र है जो सच का सामना करने के लिए समाज को आईना दिखाता है| लोग परिस्थितियों से घबराकर अपना रास्ता बदल देते हैं या फिर वे परिस्थितियों के डर से पीछे की ओर कदम हटा लेते हैं| इस कहानी में आचार्य जी ने बंशी को एक पात्र के रूप में चित्रित किया है जिसने अपनी प्रेमिका रम्भा के बदल जाने के बावजूद आखिरी दम तक उसके वापस आने का इंतजार करने की प्रबल शक्ति रखता है| जिस रम्भा को वह बचपन में एक फुलवारी में मिला था और उसकी दोस्ती उसी दिन से शुरू हो गई थी। बाद में उसके बिछड़ जाने पर भी बंशी की मोहब्बत कम नहीं होती बल्कि उसके प्रति प्रेम दिन-दिन प्रगाढ़ता की ओर अग्रसर होता गया| बंशी के घर में उसकी माँ के अतिरिक्त और कोई नहीं था| उसके पिता की मृत्यु पहले ही हो चुकी थी| वह किसी तरह बचपन से ही कुछ भेड़ों को जंगल में चराकर अपनी जीविका चलाते हुए माँ का एकमात्र सहारा बना हुआ था| बंशी की माँ अत्यंत सरल स्वभाव की महिला थी| वह हर हाल में अपने बेटे को खुश रखना चाहती थी, पर केवल किसी के चाहने मात्र से तो कोई सुखी नहीं हो जाता। उसके लिए हमें आर्थिक रूप से भी मजबूत होना चाहिए तभी हमारी जरूरतें पूरी हो सकती हैं| बंशी जब मात्र 7 वर्ष का बालक था तभी छः वर्ष की रम्भा के साथ वह घुल मिल गया था| दोनों पास के ही गाँव में रहते थे| रम्भा की भी माँ विधवा हो चुकी थी| रम्भा फुलवारी से

फूल तोड़कर बाज़ार में उसे बेचकर किसी प्रकार से गुजारा करती थी| धीरे-धीरे दोनों एक अच्छे मित्र हो गये परन्तु दुर्भाग्य की ऐसी आंधी चली कि एक दिन रम्भा की माँ की मृत्यु हो गई और अब रम्भा के आगे-पीछे कोई न था| रो-रो कर उसका बुरा हाल था| एक दिन वह जाकर एक नाटक मण्डली में भर्ती हो जाती है। उसी दिन से बंशी का मिलना जुलना उससे कम हो जाता है| रम्भा भी शायद अन्दर ही अन्दर बंशी को प्रेम करने लगी थी, परन्तु वह खुल कर उससे नहीं कह पा रही थी| एक दिन उसने नाटक मण्डली के संचालक से मिलकर बंशी को भी अपने नाटक मण्डली में सम्मिलित करने के लिये बुला लेती है| बंशी भी ख़ुशी-ख़ुशी नाटक मण्डली में शामिल होना चाहता है किन्तु उसकी माँ उसे वहां जाने से रोक देती है। वह नहीं चाहती थी कि उसका बेटा इस तरह नाटक मण्डली में काम करे| फिर एक दिन अचानक बंशी "रात को खिड़की खोलकर भाग निकला और सीधा रम्भा के पास पहुँचा| बंशी का नाम सुनते ही रम्भा दौड़ी हुई आई और हाथ पकड़ कर उसे भीतर ले गयी| वह भी अभिनय की शिक्षा पाने लगा पर एक दिन भी उसे वह सुख न मिला| उसकी माँ ढूढ़ती-ढूढ़ती आई और उसे पकड़कर ले गई| बेचारे दोनों देखते ही रह गये|"[38]

धीरे-धीरे समय के रथ का पहिया घूमता गया और कई वर्ष गुजर गये| रम्भा अब वह रम्भा नहीं रह गयी थी| उसने नृत्य कला में अपार सफलता हासिल कर लिया था। अब वह अपने नाटक मण्डली की

प्रमुख हो चुकी थी| लोग उससे मिलने के लिये अनुमति लेते थे। उधर बेचारा बंशी समय की मार के थपेड़े खाता हुआ वही अपना पुराना कार्य भेड़ को जंगल में चराना पुनः प्रारंभ कर देता है किन्तु उसके जीवन में कोई भी ऐसा पल न रहा कि जिस घड़ी उसे रम्भा की याद न आयी हो| वह रम्भा को चाहकर भी न भूल सका, जबकि रम्भा के लिये अब पैसा ही सब कुछ हो गया था। वह धीरे-धीरे बंशी को भुलाने की डगर पर चल पड़ी थी| आखिर में जब बंशी से रहा न गया तो वह एक दिन रम्भा से मिलने के लिए चल दिया। वहां पहुंचकर रम्भा के पास सन्देश भिजवाया कि कोई उससे मिलने आया है और एक ख़त लिखकर रम्भा के पास भेज दिया, जिसमें लिखा था कि "प्यारी रम्भा! मैं यहाँ आ गया हूँ और कल दोपहर को लौट जाऊंगा| क्या तुम कृपा करके मुझे दर्शन देकर मेरी आत्मा को सुखी करोगी| मैं तुम्हें देखने के लिये तरस रहा हूँ|

तुम्हारा,

बंशी "[39]......

यह चिट्ठी मिलते ही रम्भा को अपनी सभी पुरानी बातें याद आ गईं और वह बंशी से मिलने के लिये मचल उठी, पर जब वह अपने कमरे से बाहर निकलकर पार्क में बैठे बंशी को देखती है तो उसकी यह दयनीय हालत देखकर, वह उससे मिलने में शर्म महसूस करने लगी और उसी नौकर से एक ख़त लिखकर बंशी के पास भिजवा दिया- "चिट्ठी में बिजली का असर था| रम्भा के हाथ पैर कांपने लगे| उसका श्वास फूल

चला| थोड़ी देर को सबसे अलग हो वह अपने आराम करने के कमरे में चली गयी| वहां से बाहर झांककर देखा बाहर बैंच पर मैले कपड़े पहने बंशी बैठा है| न जाने किस चिंता ने उसे बेचैन बना रखा है| उसका सिर नीचे झुका है| रम्भा को अपने बचपन की सारी बातें याद आयीं| फिर उसने बंशी की ओर देखा| बंशी का सिर तब भी धरती में झुक रहा था| संभल कर रम्भा ने ख़त लिखा- ‘मुझे क्षमा करो, जरूरी कार्यवश बाहर जाना है, मिल नहीं सकती|

रम्भा|”[40]

ये थी रम्भा की असली सच्चाई। आज वह बंशी को सामने पाकर भी उससे मिलने के लिए मना कर देती है, जबकि वह पहले कभी साँस भी लेती थी तो बंशी के नाम की ही, परन्तु आज थोड़ा पैसा, रुतबा क्या कमा लिया उसे बंशी से मिलने में भी अपमान महसूस होने लगा| वह बंशी के सामने ही अपनी कार में बैठकर उसकी नजरों से ओझल हो गयी| बेचारा बंशी आज एकदम से टूट गया था| उसकी जिंदगी उसकी आँखों के सामने से ही गुजर गयी, परन्तु वह कुछ न कर सका| उसके नेत्रों ने बंशी की इस हालत देखकर दो बूँद आंसू सहसा उसके गाल पर छलका दिये| आज बंशी अंतर्मन से टूट गया था। जो आशा रूपी दीवार उसके दिल में आज तक दबी थी, वह भी ढह गयी| वह वहां से चुपचाप अपने घर की ओर चल पड़ा| जैसा प्रायः कहा जाता है कि जो जैसा

करता है वह वैसा ही भरता है अर्थात् जैसी करनी वैसी भरनी| एक बार रम्भा गुब्बारे उड़ाने वाले अपने नए प्रेमी के साथ सैर पर निकलती है। उसके साथ हवा में उड़ते- उड़ते गुब्बारे में सैर करती हुई बहुत दूर तक चली गई| अचानक मौसम खराब हुआ और जोर-जोर से बिजली भी चमकने लगी| कब प्रकृति के प्रकोप से गुब्बारा फूट गया और वे दोनों नीचे गिर पड़े उसकी उन्हें खबर ही न हुई, दोनों गिरते ही बेहोश हो गये| इस घटना में रम्भा की दोनों आँखे कुदरत छीन लेता है और वह हमेशा के लिए अंधी हो जाती है|

अन्त में जब रम्भा को होश आता है तो उसका प्रेमी जो कि बिलकुल स्वस्थ था उसने जब देखा कि रम्भा अपनी आंखें खो चुकी है तो वह उसे झूठी तसल्ली देकर वहां से नौ दो ग्यारह हो जाता है| रम्भा को तब अपने किये पर बहुत पछतावा होता है। जब सब उसका साथ छोड़ देते हैं और अस्पताल में डॉ. को फीस देने के लिये पैसे भी नहीं बचते हैं तो उसे पुनः एक बार बंशी की याद आती है| सुख की घड़ी में भले ही लोग एक दूसरे को भूल जायें, पर जब दुःख की घड़ी नजदीक आती है तो उन्हें अपना अजीज, परिवार, परम मित्र इत्यादि ही याद आते हैं, क्योंकि वही उनका अंततः सहारा बन सकते हैं| रम्भा को अपने इस दुःख की घड़ी में जब कोई और सहारा नहीं दिखाई पड़ता तो वह तुरंत एक चिठ्ठी लिखवाकर बंशी के पास भेजती है| वह चिट्ठी बंशी की माँ के हाथ लगती है। माँ बंशी को बताए बिना ही रम्भा को अपने घर ले आती

है, क्योंकि वह जानती थी कि उसका पुत्र रम्भा के ही वियोग में हमेशा खोया रहता है|

बंशी जब देखता है कि कोई लड़की उसके घर आयी है तब वह अपनी माता से पूछता है और माँ तब उसे सारी बात बताती है| बंशी को यह जानकर अत्यधिक आघात पहुँचता है और वह बहुत दुखी होकर रम्भा के पास पहुँचता है जहाँ रम्भा अकेली बैठी रो रही थी "बड़ा साहस करके दबे गले से बंशी ने कहा 'रम्भा!' आवाज पहचानकर रम्भा अपने दोनों हाथ फैलाकर बंशी को पकड़ने उठी| बंशी उसे बैठाकर शांत भाव से पास बैठकर हाल पूछने लगा| रम्भा बंशी के चरणों में लुढ़क गयी| रोते-रोते उसने कहा 'मैं अंधी अब तुम्हें स्वीकृत न होऊंगी| बंशी, तुम मुझे कभी स्वीकृत न करोगे!' बंशी की आँखों से झर-झर पानी बरसने लगा| उसने उसे गोद में उठाकर, मुख चूमकर कहा 'प्यारी रम्भा, आज मुझे मेरा खोया रत्न मिल गया है, और में कृतकृत्य हो गया| रम्भा क्या तुमने सचमुच गरीब देहाती बंशी को अपना लिया है? रम्भा ने बंशी का हृदय छूकर शपथ ली|"[41]

बंशी रम्भा की सभी गलतियों पर परदा डालते हुए, उसके द्वारा किये गए अपमानों को भूल समझकर माफ कर दिया| एक अंधी युवती जिसे कि दुनिया के लोग शायद ही कभी स्वीकार करें परन्तु बंशी का हृदय आज समुद्र से भी विशाल हो गया है। उसने उस अंधी रम्भा को, जिसे ज़माने ने ठुकरा दिया था, उसे अपने हृदय में आजीवन साथ देने

का वचन देता है और रम्भा भी उसके साथ जीवन व्यतीत करने के लिए तत्क्षण तैयार हो जाती है| रम्भा को लगता था कि शायद ही उसे अब बंशी स्वीकार करे, क्योंकि वह सोचती है कि जब उसे मेरी जरूरत थी तो मैंने उसकी गरीबी, उसके बुरे हालात को देखकर उससे दूरी बना ली थी। हवा में उड़ते हुए ऊँचे- ऊँचे ख्वाब देखने लगी थी, परन्तु आज मेरे सारे सपने, सारे ख्यालात सब मिटटी में मिल गये| फिर भी उसे बंशी स्वीकार कर लेता है और उससे शादी करने का भी वचन देता है| रम्भा के पूछने पर कि क्या तुम मुझे (इस नेत्रहीन को) स्वीकार करोगे तो बंशी मुस्कराकर रम्भा से कहता है कि रम्भा 'मैं तुम्हारी आखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ'। कुछ दिन पश्चात शुभ घड़ी में दोनों का सकुशल विवाह संपन्न हो जाता है|

प्रस्तुत कहानी द्वारा हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमें कभी भी किसी के साथ गलत व्यवहार नहीं करना चाहिये, कभी किसी को धोखा नहीं देना चाहिये, कभी किसी के साथ छल, कपट और ईर्ष्या- द्वेष की भावना नहीं रखनी चाहिये, क्योंकि हमारे कर्मों की सजा हमें जरूर मिलती है| जैसा कि उपर्युक्त कहानी में रम्भा को बंशी के साथ गलत व्यवहार करने पर उसे अपनी आंखें खोकर चुकानी पड़ी। इसलिये हमें हमेशा सत्कर्म, प्रेम-भावना, अहिंसा की भावना से प्रेरित होकर जीवन के पथ पर अग्रसर होना चाहिये| जैसा कि यह उक्ति बहुत प्रचलित है- कर भला तो हो भला|

2- नवाब ननकू

यह कहानी एक भाव कथा है जिसमें आचार और चरित्र का सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है| इस कहानी के माध्यम से आचार्य चतुरसेन शास्त्री समाज को यह बताना चाहते हैं कि यदि व्यक्ति का चरित्र ख़राब है तो उसका आचरण भी गड़बड़ हो, यह जरूरी नहीं| इस कथा में एक ऐसे ही राजा के चरित्र और आचार के सामंजस्य का वर्णन प्रस्तुत किया गया है| इस कहानी में पुरुष पात्रों की संख्या तीन तथा नारी पात्रों की संख्या एक है| यहां पर हम केवल पुरुष पात्रों का वर्णन करेंगे|

नवाब ननकू-

नवाब ननकू राजा साहब का छोटा भाई था जो हमेशा अपने बड़े भाई राजा साहब (जो कि अत्यंत शराबी, कबाबी तथा वेश्यावृत्ति के लिये मशहूर था) के सुख और दुःख में भरसक साथ देने का प्रयास करता था| राजा साहब ने जब अपनी सारी सम्पति धीरे-धीरे अपने दरबारियों, वेश्याओं और गरीबों को दान में दे दिया तब उनके पास केवल महल और चिलम पीने वाली गुड़गुड़ी और दो खास नौकर ही बचे थे, जिनका खर्च राजा स्वयं वहन करने में अक्षम हो रहे थे, क्योंकि धीरे-धीरे उनकी सारी संपत्ति समाप्त हो रही थी| एक दिन ऐसा भी समय आया कि उन्हें अपना खानदानी महल, एक अस्पताल बनाने वाले के हाथ बहुत ही कम दामों में बेचना पड़ा। अब वे कमरा किराये पर लेकर अपना गुजारा कर रहे थे|

राजा की उम्र भी अब काफी हो गई थी परन्तु उनका छोटा भाई नवाब ननकू आज भी अपनी जान पर खेलकर उनकी हर इच्छा को पूरी करता चला आ रहा था| राजेश्वरी जब भी राजा से मिलने के लिए आती थी तो राजा उसे खाली हाथ न भेजकर, कुछ न कुछ उपहार स्वरूप जरूर दिया करते थे। परन्तु आज कुदरत शायद राजा की ही परीक्षा लेने पर तुला हुआ था जो इस विषम परिस्थिति में राजा के पास राजेश्वरी को आने के लिये मजबूर कर दिया था| जैसे ही नवाब ननकू को यह पता चला कि उनके पास राजा की बांदी जो कि अब वेश्यावृत्ति को अपना चुकी थी| वह आज एक बार फिर से राजा के इस दुर्दिन में साथ देने आई है तो नवाब ननकू अपनी माँ की निशानी 'लहंगा' को कपड़े में लपेट कर एक सेठ के यहाँ गिरवीं रखने के लिये निकल पड़ा| उस सेठ से 40 रुपए लेकर नवाब ननकू राजेश्वरी के स्वागत के लिये सारी समग्री जुटाने लगा| तत्पश्चात वह शराब, मदिरा, कबाब इत्यादि चीजें लेकर राजा साहब के पास पहुँच जाता है|

वे सभी मिलकर शराब पीते हैं और चिलम का आनंद भी राजा और राजेश्वरी लेते हैं| आज राजेश्वरी अपने पुराने प्रेम की भावना को जाग्रत करते हुए राजा साहब के आगोश में छिप जाना चाहती थी, परन्तु अनुकूल वातावरण न होने के कारण उसे थोड़ी असहजता महसूस हुई| नवाब ननकू ने आज फिर अपने बड़े भाई या यूं कहे तो शराबी राजा को राजेश्वरी से अपने नृत्य प्रदर्शन करने को कहते हैं| फिर क्या था राजेश्वरी

तो राजा साहब के लिये अपनी जान छिड़कती थी| ढोल, हारमोनियम तथा तबला मंगाया गया और राजेश्वरी अपने अनुपम सौन्दर्य और नृत्य के बलबूते उन दोनों को अत्यंत प्रसन्न कर देती है|

यहाँ पर राजा साहब का चरित्र अत्यंत ही दागदार है किन्तु उन्होंने ऐसा कोई काम नहीं किया जिससे जनता को या किसी अपने स्नेहीजन को तकलीफ पहुँची हो। जब तक उनके पास दौलत का भंडार था तब तक वे अपने दोनों हाथों से खुलकर सबकी सहायता करने के लिये हर क्षण प्रस्तुत रहते थे| इसी भावनाओं की सहजता को दिल में संजोये हुए नवाब ननकू उनके लिए हर प्रकार की सहायता करने में अपनी अग्रणी भूमिका निभाते हैं| नवाब ननकू बहुत ईमानदार और स्वामिभक्त था। अपने बड़े भाई की रक्षा, सुख-दुःख इत्यादि में हर पल सीना ताने वह खड़ा रहता था| राजा के बिना कुछ कहे ही वह सारी चीजें अपने पैसे और मेहनत के बल पर करता था, जिससे समस्त लोगों में नवाब ननकू की छवि एक भले मानुष की तरह बस चुकी थी| असल में राजा साहब और नवाब ननकू की माता दो थी, परन्तु पिता उनके एक थे| नवाब ननकू की माता का देहान्त हो चुका था जिसके कारण वह पिता के द्वारा दिया हुआ उसकी माता का 'लहंगा' एक सेठ के पास गिरवी रख कर 40 रुपये ले आता है और राजा साहब के मेहमान की आवभगत पूरे जी जान से करता है|

राजा साहब-

प्रस्तुत कहानी में आचार्य जी ने राजा साहब को एक ऐसे राजा के रूप में दिखाया है जो शराबी-कबाबी, वेश्यागामी, लम्पट-रईस है| जिन्होंने इसी काम में अपनी सारी संपत्ति फूंक दी और अब दारिद्रय और रोग का भोग कर रहे हैं परन्तु राजा ने अपने आचार-विचार तथा लोगों के मान -सम्मान में कभी कमी नहीं होने दिया| उन्होंने सारी संपत्ति गरीबों, मजदूरों तथा महल के कर्मचारियों को ख़ुशी-ख़ुशी दे दिया| राजा साहब का महल भी अब बिक चुका था जिसकी वजह से वहां पर एक सुन्दर अस्पताल भी बन गया था| सभी लोग उस अस्पताल में अपना इलाज कराते थे तथा राजा का गुणगान करते थे| राजा के पिताजी ने दो पत्नियाँ रखी थीं| राजा ने अपनी नौकरानी से ही प्रेम कर लिया था और उससे राजा को एक बेटा भी हुआ जिसका नाम कुंवर साहब था| वह बड़ा ही विनम्र और आदर्श बालक था| राजेश्वरी तो थी ही वेश्या पर कभी-कभी राजा की खिदमत में उनसे मिलने आती रहती थी| राजा अब अपने अंतिम समय की ओर बढ़ रहे थे| आज अचानक कई महीनों के बाद राजेश्वरी पुनः राजा का हाल-चाल लेने आयी थी, क्योंकि राजा अब बहुत निर्धन होने के कगार पर पहुँच चुके थे।

राजेश्वरी राजा साहब के पैसे से ही काफी अमीरी की स्थिति में पहुंची थी| उसकी खिदमत में राजा अपनी तरफ से कोई कमी नहीं होने देना चाहते थे, परन्तु उनके पास ऐसी कोई दौलत नहीं बची दिख रही थी

जिससे वे उसे भेंट स्वरुप दे सकें| परिस्थितियों को भाँपते हुए उनका छोटा भाई नवाब ननकू अपनी माँ के लहंगे को एक सेठ के यहाँ गिरवी रखता है और 40 रुपये लेकर राजेश्वरी के लिये शराब-कबाब आदि का तत्क्षण बंदोबस्त करता है| राजा साहब नवाब ननकू की इस सेवा भावना से अत्यंत विह्वल हो उठे और नवाब ननकू से पूछा "यह, कहो रात सामान कैसे जुटाया था| मैं जानता हूँ तुम्हारे पास छदाम न था| 'जुट गया यों ही| नवाब हूँ, कोई अदना आदमी नहीं|'

'मगर सच-सच कहो|'

'झूठ से फायदा? चालीस रुपये बाबू साहब से लिये थे|'

'बड़ी तकलीफ दी उन्हें| अब ये रुपये दिये कैसे जाएँ?'

'जल्दी नहीं है सरकार, रहन पर लाया हूँ| यों ही नहीं, जब हाथ खुला होगा, दे देंगे|'

'रहन क्या रखा?'

'एक अदद था|'

'क्या अदद बताओ?'

'अम्मी का लहंगा था|"[42]

यह सुनकर राजा साहब निश्चल हो गये और उनकी आँखों के कोरों से अनायास ही आंसू बहने लगे| वे नवाब के इस कार्य के कारण अन्दर ही अन्दर भावुकता से भर गये तथा उनका हाथ नवाब ननकू के हाथ में ही था|

रामधन-

रामधन राजा का एक विश्वास पात्र सेवक था| राजा के दरबार में पहले उसके पिता रहते थे फिर उनके स्थान पर उसे नियुक्त कर दिया गया था| रामधन ने अपनी ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा और अच्छे आचरण से राजा के दिल में अपना स्थान बना लिया था| राजा साहब के पास जब संपत्ति का खूब भंडार था तो उन्होंने उसके पिता को काफी धन-दौलत देकर उनकी गरीबी को दूर किया था जिसके परिणाम स्वरूप रामधन आज भी अपने परिवार के प्रति किये गये अहसानों का सम्मान करते हुए राजा साहब के बुरे दिन में उनके साथ खड़ा है, जबकि रामधन को दो-दो महीने तक कभी-कभी पगार भी नहीं मिल पाती थी फिर भी रामधन राजा का साथ उनके इस दारिद्रय स्थिति को देखते हुए बराबर निभा रहा था| एक दिन जब नवाब ननकू रामधन को किसी बात पर बिगड़ जाते हैं और उसे गाली भी देते हैं तो “रामधन ने नवाब के पैर छूकर कहा- हुज़ूर आपकी गालियाँ खाकर ही तो जी रहा हूँ| रुपया-पैसा सरकार का दिया बहुत है|”[43]

इस कहानी में रामधन का चरित्र बहुत ही उज्ज्वल दिखाई पड़ता है| जिस प्रकार से रामधन गाली खाने के बाद भी अपनी शालीनता को नहीं भूला तथा पैर छूकर के सहर्ष मुस्कराता है और उनका बराबर सम्मान करता है, उसके चरित्र की अच्छाइयों का पता चलता है|

3- विश्वास पर विश्वास-

इस कहानी में कहानीकार ने एक ऐसी स्त्री के विषय में वर्णन किया है जिसे पग-पग पर अपने जीवन में ठोकरें मिली है| जीवन की विपरीत परिस्थितियों में जिसने अपने मान-सम्मान को कभी डिगने न दिया हो, उसे ही अपने प्राणों से प्रिय पति के द्वारा अपनी जीवन लीला समाप्त करनी पड़ी| जिसकी सारी मनोकामनाएं अन्तिम समय तक अपूर्ण रहीं| प्रस्तुत कहानी में लेखक एक ऐसे ही नर-पिशाच की जीवनचर्या को अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के सम्मुख प्रदर्शित करने का प्रयास किया है| पुरुष पात्रों में नन्दू, रामसिंह ही दो प्रमुख पात्र हैं तथा महिला पात्रों में नन्दू की पत्नी मैना और रामसिंह की बूढ़ी विधवा मां हैं|

नन्दू-

नन्दू एक ऐसा पुरुष पात्र है जो तकरीबन 50 वर्ष की उम्र पार कर चुका है| वह बस्ती से बाहर छोटी पहाड़ी के समीप एक झोपड़ी में रहता था। उसके साथ उस झोपड़ी में उसकी पत्नी मैना भी रहती थी| नन्दू की आदत इतनी बिगड़ चुकी थी कि वह मनुष्य होकर भी नर-पशु की तरह जीवन यापन करता था| अत्यधिक शराब और नशे के कारण उसकी उम्र अधिक प्रतीत होती थी| उसके चेहरे की खाल लटक गई थी और दांत भी दो, एक गिर चुके थे| वह अपने शरीर पर जरा भी ध्यान न देता था और हमेशा मैले-कुचैले, फटे पुराने कपड़ों में ही रहता था| उस

जंगल में वह एक जंगली पशु की भांति जीवन व्यतीत कर रहा था| चोरी, डकैती तथा छीना-झपटी करके अपनी जीवन की गाड़ी को खींचता चला आ रहा था| कब वह पुलिस या गुंडों के हत्थे चढ़ जायेगा इसका कोई भरोसा भी न था| हर वक्त वह चौकन्ना रहता था तथा इस कार्य में उसकी पत्नी मैना बराबर उसका साथ देती थी| वह अत्यंत सुन्दर, आकर्षक, मनमोहक और सद्व्यवहार वाली स्त्री थी|

वह अपने पति के अतिरिक्त किसी गैर मर्द या पुरुष के बारे में सोचना भी पाप समझती थी। मगर जितनी वह पतिव्रता और दयालु स्वभाव की थी उसका पति नन्दू उतना ही कठोर, निष्ठुर तथा बदमाश था| वह आये दिन शराब के नशे में धुत होकर पत्नी को पीटता था| कभी-कभी इतना ज्यादा उसको मारता-पीटता था कि वह सहते-सहते मूर्छित हो जाती थी| मैना कभी भी पलटकर जवाब देना नहीं जानती थी| सरकारी अधिकारी पुलिस से लेकर साधारण नागरिक तक उस बदमाश नन्दू को, उसके कानून विरुद्ध कार्यों तथा उसके द्वारा नित्य किये गए अपराधों के द्वारा जानते थे- “वास्तव में चोरी, डकैती, अफीम बेचना, जाली रुपया बनाना आदि कुकर्म ही उस अधम पति का व्यवसाय था| व्यवसाय यहीं तक रहता तो भी उसमें एक मर्दानगी थी, परन्तु वह नर पशु अपने व्यवसाय की सहायता में चाहे जब निःसंकोच भाव से अपनी पत्नी के सौन्दर्य का उपयोग कर लेता था| किसी भी सुलक्षणा पतिव्रता स्त्री के लिए यह कितना कठिन है, इस बात पर विचार करना चाहिए।

उठती हुई उम्र की युवती, परम सुन्दरी, जीवन की स्वाभाविक लालसाओं और अभिलाषाओं के स्थान पर जो हृदय की प्रत्येक तरंग के साथ उठती हो, उसे अपने पवित्र विश्वास, अभ्यास और धर्म के विपरीत पति ही की आज्ञा से वह अभिनय भी करना पड़ता था|"[44]

नन्दू चोरी, डकैती का माल घर में लाकर जमीन के अन्दर छिपा देता था| यह बात उसकी पत्नी के अलावा किसी और को पता न थी| नन्दू के घर पर न जाने कितनी बार छापा पड़ा, परन्तु उसकी पत्नी ने अपनी धैर्य व बुद्धि के बल पर इस राज को राज ही रहने दिया| किन्तु एक बार जब एक सिपाही उसकी रक्षा एक सिंह से करता है तो उसके घर आने पर वह अपना सारा भेद वह बता देती है और उसे अपना दिल भी दे बैठती है| परिणाम स्वरूप जब नन्दू को यह बात पता चलती है तो वह उसकी चालाकी से हत्या कर देता है|

रामसिंह-

रामसिंह एक सिपाही था जिसकी उम्र लगभग 20 वर्ष के आस-पास थी| वह बहुत ही सुन्दर, सहृदय और अपने दायित्वों का सकुशल निर्वहन करने वाला व्यक्ति था| वह अपनी वृद्धा और दरिद्र विधवा माता का एक मात्र बेटा था| वह अभी एक वर्ष पहले ही सिपाही में भर्ती हुआ था| सिपाही रामसिंह को ही नन्दू को पकड़ने और चोरी का माल बरामद करने की जिम्मेदारी मिली थी| रामसिंह जब नन्दू के घर

की तरफ जा रहा था तो संयोग से नंदू की पत्नी मैना जंगल में फूल चुन रही थी और एक सिंह उस पर आक्रमण करने की तैयारी में था| सिपाही ने देखते ही उस सिंह को मार गिराया और मैना को घोड़े पर बैठाकर उसके घर तक पहुँचाया| अगले दिन जब रामसिंह अपनी जिम्मेदारी को पूरा करने के उद्देश्य से वहां पहुँचा तो उसी स्त्री मैना को देखकर वह दंग रह गया| मैना उसे मना न कर सकी और सारी सच्चाई बता दिया| बड़ा अफसर बनने के बाद और उसकी शादी से पहले एक बार मैना उसे अपने पास मिलने के लिए आग्रह करती है|

रामसिंह वहां से माल लेकर तीर की भांति निकला और ऑफिसर के द्वार पर पहुँचते ही अचानक उसके कदम रुक गये| वह मैना के द्वारा किये गये समर्पण भावना में खोने लगा- “किस तरह चुपचाप उसे मैंने अपनी तलवार निकाल लेने दी, किस तरह वह धीरे-धीरे मेरी छाती तक तलवार की नोंक ले आई| अगर वह उसे छाती में सुई की तरह घुसेड़ देती तो क्या मैं उसे रोकता? कदापि नहीं| फिर मैं मर्द क्या हुआ| वह घाव तो हजार बार खाता, परन्तु आँखों के घाव का क्या किया जाये? वह आँखों की बर्छी कलेजे में पार करती हुई धरती में बैठ गई| उसी तलवार की नोंक से उसने पत्थर उखाड़, चोरी का माल मुझे दिया| शत्रु से ही शत्रु मारा गया, परन्तु यह अबला स्त्री हाथ में तलवार पाकर भी विश्वास घात न कर सकी|”[45]

रामसिंह मैना की उदारशीलता और दरियादिली के आगे नतमस्तक हो गया और अपने मन से बड़ा अफसर बनने का ख्याल निकालकर पूरा बरामद माल उसे लौटाने के लिए उसके घर के सम्मुख जा पहुंचा| जब दरवाजा खटखटाया तो मैना बाहर निकली और रामसिंह को कमरे के अन्दर ले गई| नन्दू को यह समझते देर न लगी कि ये दोनों आपस में मिलकर मुझे धोखा दे रहे हैं| जब मैना ने रामसिंह को दिखाया कि तुम्हारे द्वारा माल ले जाने के बाद, मेरे पति ने मुझे बहुत मारा-पीटा था तो वह अत्यंत ही आग बबूला हो गया और दोनों के बीच लड़ाई हो गई। अंततः नन्दू चोट खाकर जमीन पर गिर पड़ा, तब वह नई चाल चलते हुए मैना से कहता है कि मेरी प्यारी पत्नी मैंने तुम्हारे साथ बहुत गलत किया है| अब मैं मरने वाला हूँ तो तुमसे झूठ नहीं बोलूँगा| तुम खुशी-खुशी इस सिपाही के साथ जाओ परन्तु जाते-जाते एक बार मुझे अपने इन प्यारे हाथों से पानी तो पिलाती जाओ, जिससे कि मैं सुकून से मर सकूं।

तत्पश्चात मैना ने उसे पानी पिलाया और जब वह जाने लगी तो नन्दू ने फिर कहा मेरी आंखें बंद होने से पहले एक बार तुम मेरे गले से लग जाओ फिर चली जाना| पत्नी ने सोचा अब तो मेरे पति बस कुछ पल के ही मेहमान हैं क्यों न इनकी इच्छा पूरी कर दी जाय| जैसे ही वह पति से गले मिलने लगी तभी नन्दू ने मौका पाकर चुपके से उसके सीने में चाकू घोंप दिया| सिपाही रामसिंह ने जब देखा तो उसके होश ही उड़

गये कि यह क्या हो गया, जिसे प्राप्त करने के लिये मैंने सारा माल वापस कर दिया वही अब मृत्यु के कगार पर है| कुछ ही देर में सिपाही की ही गोद में मैना ने दम तोड़ दिया, नंदू भी मर चुका था| सिपाही रामसिंह अपने कर्तव्य का निर्वहन पूर्ण रूप से न कर पाने के कारण ऑफिसर के सामने खुद को आत्मसमर्पण कर दिया और एक साल की कठिन सजा को प्राप्त किया|

इस कहानी के माध्यम से यह सन्देश मिलता है कि आज-कल किसी भी व्यक्ति के प्रति तुरंत विश्वास नहीं करना चाहिये| जिस प्रकार से मैना को अपने पति नन्दू पर बार-बार विश्वास करने के बावजूद उसे अंत में मौत की ही सजा मिली| इसलिये हमें भी अपने जीवन में किसी पर भी बिना सोचे-समझे विश्वास नहीं करना चाहिए, नहीं तो उसके कितने भयावह परिणाम हो सकते हैं यह प्रस्तुत कहानी में हम देख चुके हैं|

सुखदान-

यह एक ऐसी कहानी है जो ह्रदय के हर एक तार को झकझोर देती है| यह कहानी पति-पत्नी के पवित्र रिश्ते पर तो आधारित है ही किन्तु उनका प्रेम शारीरिक प्रेम की आकांक्षा नहीं रखता अपितु वह आध्यात्मिक प्रेम को यथा सम्भव बढ़ावा देता हुआ स्पष्ट दिखाई देता है| जैसा कि समाज में जब कभी शादी-विवाह की बात उठती है तो वहां आध्यात्मिक प्रेम की अपेक्षा शारीरिक प्रेम को अधिक उठता हुआ

स्पष्टतया देखा जा सकता है| इस कहानी में आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने न तो 'दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी' की तरह, न ही 'अम्बपालिका' कहानी की तरह इसे शारीरिक प्रेम पाश में बांधने का प्रयास किया है बल्कि इस कहानी में आध्यात्मिक प्रेम को शीर्ष के धरातल पर उतारते हुए 'मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ' कहानी की तरह एक सामाजिक तथा अभिन्न प्रेम को प्रदर्शित करने का पूर्ण प्रयास किया है| शास्त्री जी की यह बड़ी विशेषता है कि वे समाज के विभिन्न पहलुओं को बड़ी तटस्थता के साथ समझते हुए हर वर्ग के लोगों के जीवन पर प्रकाश डालते दिखाई पड़ते हैं|

उनका कहानी लेखन एक मुखी न होकर चहुँमुखी दिखाई देता है| चाहे वह किसी राजघराने का काला चिठ्ठा हो या किसी गरीब समुदाय के लोगों का उज्ज्वल और निर्मल प्रेम, चाहे वो किसी उच्च समुदाय के लोगों का अतिशय शराब, मांस या नशे में आच्छादित प्रेम हो या निम्न समुदाय के लोगों का गंगा की तरह निश्छल और पवित्र प्रेम| आचार्य जी की लेखनी हर तरफ समाज की यथास्थिति का वर्णन निडर होकर करती है। चाहे राजनीति का क्षेत्र हो या धार्मिक क्षेत्र, चाहे सामाजिक क्षेत्र हो या मनोवैज्ञानिक क्षेत्र, हर क्षेत्र में शास्त्री जी को महारथ हासिल हुई है| यही वजह है कि इनकी कहानियां अत्यधिक प्रसिद्ध हुई हैं और लोग उसे एक ही बार में पूरा पढ़ने को आतुर हो जाते हैं, क्योंकि उन कहानियों के विषय ही ऐसे रोचक तथा आकर्षण युक्त होते हैं कि वे स्वाभाविक ही

अपनी ओर पाठक को आकर्षित कर लेती हैं फिर जब विषय की बात आती है तो पाठक धीरे-धीरे उस रसातल में स्वतः उतरता जाता है और अपने आपको लाख रोकने के बावजूद उसमें डूबता जाता है| ऐसी ही एक कहानी 'सुख दान' है, जिसमें पति-पत्नी के शारीरिक प्रेम की अपेक्षा आध्यात्मिक और सामाजिक प्रेम को अधिक श्रेष्ठ बताया गया है| इस कहानी के पुरुष पात्रों में विद्यानाथ, घीसू, रामानन्द बाबू हैं तथा स्त्री पात्रों में केवल सुषमा ही है|

विद्यानाथ-

विद्यानाथ किसी कालेज में एक प्रोफ़ेसर थे। उनका जीवन अत्यंत सुखमय था| घर में ज्यादा लोग भी नहीं थे| जब विद्यानाथ की शादी हुई तो वह अत्यंत आनन्दित जीवन व्यतीत कर रहे थे| इसी तरह कई वर्ष व्यतीत हो गये, पर घर में किसी बच्चे की किलकारी न गूँजी| कुछ दिनों पश्चात वह थोड़े उदास से रहने लगे, क्योंकि समय उनकी मुट्ठी से रेत की तरह फिसलता जा रहा था| विद्यानाथ की पत्नी की एक छोटी बहन भी थी जो अपनी बहन के साथ ही रहती थी| विद्यानाथ ही घर पर उसे पढ़ाते थे| धीरे-धीरे उसकी आगे की पढ़ाई भी विद्यानाथ करवाने लगे और जब भी उन्हें समय मिलता उसे घर पर भी पढ़ाते थे| पर धीरे-धीरे समय गुजरता गया और सुषमा धीरे-धीरे बड़ी होती गई| एक दिन अचानक उनकी पत्नी की तबियत गड़बड़ हुई और काफी दवा कराने के

पश्चात भी वह बच न सकी| विधाता की लेखनी को कौन टाल सकता है, अन्ततः वह मृत्यु को प्राप्त हो गयी| विद्यानाथ के उस भरे गुलशन में से जैसे कोई सबसे कीमती पुष्प सूख गया हो, उनकी आँखों के सामने ही घोर अँधेरा छा गया और वे अत्यंत दुखी तथा अप्रसन्न रहने लगे| बहुत दिनों के बाद ही वे अपने आप को संभाल पाये| घर वालों ने राय दी कि पत्नी के गुजर जाने के बाद तुम उसकी छोटी बहन सुषमा से शादी कर लो, पर विद्यानाथ इसके लिए तैयार नहीं हुए| अंततः वे शादी के लिए तैयार हो जाते हैं|

सुषमा के पिता 'रामानन्द' भी चाहते थे कि बड़ी बेटी की मृत्यु के पश्चात उनकी छोटी बेटी विद्यानाथ के घर-परिवार को देखे| हालांकि सुषमा विद्यानाथ से उम्र में अत्यधिक छोटी थी, उन्हीं से पढ़ी-लिखी थी| जब उसे अपने गुरु एवं जीजा से ही शादी करने के लिए कहा गया तो वह बिल्कुल असहज महसूस करने लगी। उधर सुषमा के पिताजी और दामाद ने मिलकर रिश्ता तय कर लिया| सुषमा की सहमति भी लेना उन्होंने उचित न समझा| रिश्तों के तले दबी हुई और गुरु की आज्ञा समझकर न चाहते हुए भी सुषमा विद्यानाथ से शादी करने का निश्चय मन ही मन कर लेती है| यहाँ पर एक नारी के त्याग और समर्पण की भावना स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है| सुषमा चाहती तो अपने से अधिक उम्र वाले विद्यानाथ के साथ शादी करने से साफ इनकार कर देती, परन्तु अपनी सुख-सुविधाओं तथा अपनी आवश्यकताओं को दर-

किनार करते हुए, यह जहर रूपी कड़वा घूँट सहर्ष पीने के लिए वह तैयार हो जाती है| फिर एक दिन विद्यानाथ और सुषमा दोनों का शुभ घड़ी में विवाह सम्पन्न हो जाता है| सुहागरात के समय जब विद्यानाथ को अन्दर कमरे में जाने के लिये कई बार कहा गया तब भी उनकी कमरे में जाने की हिम्मत नहीं हो रही थी, क्योंकि सुषमा के पास (जो उनकी बेटी की उम्र की थी) कैसे जाएँ|

फिर कई बार कहने के पश्चात वे किसी प्रकार से अन्दर गये जिसका वर्णन करते हुए लेखक ने लिखा है कि “शयनागार सजाया गया है, यह कहा जा सकता था| शय्या पर स्वच्छ, सफ़ेद चादर और उस पर तकिया, तकिये पर ताजे बेले के फूलों की दो मालाएँ, सिरहाने धूपबत्ती से उड़ता हुआ सुगन्धित धूम्र और खिड़कियों पर नए परदे, टेबिल पर जलपान का थोड़ा सामान और सबके ऊपर कमरे के बीचों-बीच एक अच्छी आराम कुर्सी पर बैठी हुई सुषमा, जो एक महीन पाढ़ की उज्ज्वल साड़ी पहने कोई पत्रिका उद्विग्न चित्त से पढ़ रही थी| विद्यानाथ चुपचाप सुषमा के सामने जा खड़े हुए, हजारों बार देखी हुई सुषमा को इस बार वे सम्पूर्ण शक्ति लगाकर भी आंख उठाकर देखने में समर्थ नहीं हो सके| सुषमा ने पत्रिका से आँख उठाकर देखा और मृदु हास के साथ कहा ‘वहां खड़े क्यों रह गये आप? यहाँ आइए| दो घंटे से मैं आपके इन्तजार में बैठी हूँ| आज कल क्या आप बहुत देर में सोते हैं? पहले तो आप जल्दी ही सो जाया करते थे| मैं.....”[46]

विद्यानाथ जिस सुषमा को हमेशा घर में देखते थे और जिसे स्वयं पढ़ाते भी थे| आज उसी लड़की से विवाह हो जाने के पश्चात वे किस कदर आंख चुराकर, उससे नजरें तक नहीं मिला पा रहे थे| शादी तो उन्होंने कर ली थी पर उनकी हिम्मत नहीं हो रही थी कि वे सुषमा से नजर मिलाकर बात कर सकें| जब विद्यानाथ ने शयनागार में प्रवेश किया तो सुषमा ने देखा कि उनकी आँखों से लगातार आंसू झरने की तरह गिर रहे थे, उनकी पलकें नीचे की ओर झुकी हुईं थीं| वे कुछ भी कह पाने की स्थिति में बिल्कुल न थे| धीरे-धीरे समय बीतता गया और दोनों एक दूसरे को जानने समझने लगे| उनके शारीरिक मिलन की अपेक्षा आध्यात्मिक मिलन अधिक हुआ| सुषमा बहुत सुन्दर, आकर्षक तथा मन को मोह लेने वाली महिला थी, जो कोई उसे देखता था उस पर मोहित हो जाता था| विद्यानाथ भी उस पर मोहित थे परन्तु अपनी उम्र ज्यादा होने के कारण वे थोड़ा सहमे-सहमे से नजर आते थे| अंत में सब कुछ ठीक हो जाता है| सुषमा द्वारा उन्हें एक सुन्दर पुत्र की प्राप्ति होती है और उनका जीवन धन्य हो जाता है। पूरा घर बच्चे की किलकारी से गूँज उठा, जिसकी तमन्ना उन्हें वर्षों से थी।

इस प्रकार उनकी वर्षों की साध भी पूरी हो जाती है| विद्यानाथ पुत्र प्राप्ति के पश्चात् उसी में खुश रहने लगे और अपना सुखपूर्वक जीवन यापन करने लगे| जिस प्रकार से सुषमा के सौन्दर्य तथा रूप का वर्णन यहाँ देखने को मिलता है उसी प्रकार से हिंदी उपन्यासकार मुंशी प्रेमचंद

जी ने अपनी कहानी ‘आखिरी मंज़िल’ में मोहिनी के रूप सौन्दर्य का वर्णन किया है| “मोहिनी ने बड़ा आकर्षक रूप पाया था| उसके सौन्दर्य में एक आश्चर्यजनक बात थी| उसे प्यार करना मुश्किल था, वह पूजने के योग्य थी| उसके चेहरे पर हमेशा एक बड़ी लुभावनी आत्मिकता की दीप्ति रहती थी| उसकी आँखें जिनमें लाज, गम्भीरता और पवित्रता का नशा था, प्रेम का स्रोत थीं| उसकी एक-एक चितवन, एक-एक क्रिया, एक-एक बात उसके हृदय की पवित्रता और सच्चाई का असर दिल में पैदा करती थी| उसकी आँखों से आत्मिक भावों की किरणें निकलती थीं मगर होंठ प्रेम की बानी से अपरिचित थे|”[47]

रामानन्द-

रामानन्द विद्यानाथ के ससुर तथा सुषमा के पिता थे| उनकी पहली बेटी का ब्याह विद्यानाथ के साथ हुआ था| उसकी मृत्यु के पश्चात उन्होंने अपनी छोटी पुत्री सुषमा का विवाह भी अपने उसी दामाद के साथ कर दिया| रामानन्द एक सामाजिक तथा धर्मपरायण पुरुष थे| रात-दिन अपनी पुत्रियों की सुख-सुविधाओं का ख्याल रखने में वे ज़रा सी भी असावधानी नहीं बरतते थे| पर जब ईश्वर ही किसी से रूठ जाये तो बेचारा इंसान चाहकर भी कुछ नहीं कर सकता| हम अपनी सुख सुविधाओं के लिये हर सम्भव प्रयास करते हैं, पर यदि ऊपर वाला नहीं चाहता है तो हमारे हाथ में कुछ भी नहीं रहता|

रामानन्द जी ने अपनी बड़ी बेटी का विवाह तो बड़ी धूम-धाम से किया था, उनका दामाद भी एक अच्छे कालेज में प्रोफ़ेसर था परन्तु नियति को शायद कुछ और ही मंजूर था जिसने उनसे उनकी बेटी को असमय ही छीन लिया| फिर रामानन्द अपनी छोटी पुत्री सुषमा की भी शादी विद्यानाथ से कर देते हैं| भले ही विद्यानाथ सुषमा से उम्र में काफी बड़े थे परन्तु विद्यानाथ में रामानन्द को सारे अच्छे गुण मौजूद दिखाई दे रहे थे, सिवाय उनकी उम्र के| प्रस्तुत कहानी में रामानन्द ने एक पिता का फर्ज बखूबी निभाया है| रामानन्द जब घर से आ रहे थे तो उनकी पत्नी ने सुषमा के लिए हीरे की एक जोड़ी 'ईयरिंग' भेजी थी| जिसे सुषमा को दिखाते हुए "रामानन्द ने चाभी देकर कहा- खोल फिर वह ट्रंक! सुषमा ने देखा, ऊपर ही एक केस रखा था| उसमें बहुत ही सुन्दर हीरे के एक जोड़ी ईयरिंग थे| उसने बच्चे की भांति उछलकर कहा 'वाह, कैसे सुन्दर हैं ये! फिर आइने के सामने जा उन्हें कान में पहना और पिता के पास जाकर कहा 'अच्छा, सच कहो, तुम लाए हो या अम्मा ने भेजे हैं?"[48]

इस तरह रामानन्द अपनी पुत्री की खुशियों को समझते हुए जब भी घर से आते तो कुछ न कुछ जरूर ले आते थे| वही प्रथा या रीति आज भी हमारे समाज में चलती आ रही है| आज भी पिता जब बेटी के यहां जाता है तो खाली हाथ नहीं जाता है।

घीसू-

घीसू विद्यानाथ के घर का एक नौकर था| वह बेहद ईमानदार, चालाक और कामकाजी व्यक्ति था| वह घर के सारे काम-काज बखूबी समय से करता था| जैसा कि समाज में अक्सर देखा जाता है अधिकांश नौकर चोर होते हैं या तो कामचोर अथवा लालची, पर घीसू निहायत ईमानदार और कुशल नौकर था| घर का सारा काम-काज करने के पश्चात सबको खाना भी टेबल पर परोस कर खिलाता था| कुल मिलाकर घीसू का चरित्र उज्ज्वल एवं शानदार दिखाई पड़ता है|

5- तिकड़म-

यह एक ऐसी कहानी है जिसमें एक तिकड़म बाज की तिकड़मपूर्ण हास्यास्पद चेष्टा का मनोरंजक वर्णन मिलता है| एक ऐसा व्यक्ति जिसने अपने पूरे जीवन को ही हास्यात्मक बना लिया उसकी सारी इज्जत और मर्यादा अन्त में सबके सामने चली जाती है। हालांकि वह अपने आपको अत्यंत चालाक और विद्वान समझता था| परन्तु जब समय विपरीत होता है तो हाथी पर बैठे व्यक्ति को भी कुत्ता काट ही लेता है| वही हाल था इस कहानी के प्रमुख पुरुष पात्रों में मि० रामनाथ का। अन्य पुरुष पात्रों में उसके दोस्त बलदेव, हजरत, रघुनाथ, रामनाथ के साले और ससुर का उल्लेख आता है|

मि० रामनाथ-

मि० रामनाथ बहुत ही चालाक तथा कुशल तिकड़मबाज थे| वे अपने दफ्तर में अक्सर किसी न किसी को तिकड़म के जरिये आपस में कहा-सुनी करवा देते थे| उनकी एक ख़ास बात यह थी कि वे झूठ भी इतनी सफाई से बोलते थे कि लोगों को जरा सा भी संदेह नहीं हो पाता था| सीधे-साधे लोग उसके झांसे में आकर बेवकूफ की पदवी अनायास ही प्राप्त कर लेते थे| एक बार रामनाथ को जब अपने किसी खास दोस्त की शादी में औरंगाबाद जाना था तो दफ्तर में छुट्टी के लिए उसने अनुमति मांगी, अनुमति न मिलने पर उसने अपना पुराना हथियार प्रयोग में लाया और ऐसा तिकड़म भिड़ाया, बड़े साहब को ऐसा झांसा दिया कि छुट्टी उन्होंने तत्काल स्वीकार कर दी| जैसा कि आजकल हम सब अपने समाज, दफ्तर, स्कूल या कम्पनी में अक्सर देखते हैं कि आये दिन लोग झूठे बहाने या कोई जरुरी कार्य बताकर छुट्टी ले लेते हैं। उसी तरह से रामनाथ भी अक्सर अपने हुनर तिकड़मबाज की वजह से छुट्टियाँ लेकर मौज-मस्ती करता हुआ दिखाई पड़ता है| जब वह अपने दोस्तों से उस शादी में हुए घटनाक्रमों को विस्तार से बताने लगा तो उसके दोस्त भी उसकी बातों को बड़ी चाव से सुन-सुनकर आनंदित होते थे| रामनाथ की बातें हमेशा हास्यात्मक, चुटकीली और मुहावरेदार होती थी- “रामनाथ ने फिर एक साँस ली और कहना शुरू किया ‘कोई दस बजे का समय था| बाजे बज रहे थे, दूल्हा- दुल्हिन पलंग पर बैठे थे, औरतों ने उन्हें घेर

रखा था| कोई गा रही थी, कोई बकवाद कर रही थी| एक चकल्लस मची हुई थी| इतने में एक बाला पर मेरी बदनसीब नजर पड़ गई| वाह दोस्त, हमने क्या कहा था'| एक बोल उठा| दोस्तों ने कहा जरूर वह सैकड़ों में एक होगी, फिर आपने कोई तीर-ऊर फेंका? सैकड़ों में? म्यां, लाखों में! रामनाथ ने जोश में आकर कहा|"[49]

उस रात की सारी बातें अपने दोस्तों से बताते हुए रामनाथ कहता है कि वह लड़की मेरे जिस दोस्त की शादी थी, उसी की साली थी और वह कुँवारी कन्या थी| मेरा दिल उस पर आ गया और मैं उसके साथ शादी के हसीन सपने भी देख रहा हूँ| उसके दोस्तों ने उसे समझाया कि तुम तो पहले से ही शादी-शुदा हो और अब दूसरी शादी की तैयारी भी कर रहे हो| रामनाथ ने कहा तुम सब गधे हो और मेरी बात तुम्हारे भेजे में नहीं आयेगी| दरअसल बात यह है कि मैंने वहां ऐसा तिकड़म भिड़ाया है कि सब मेरी शादी खुद उससे करवाने के लिए तैयार हो गये| सभी दोस्तों को अब बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कैसे सम्भव हो सकता है| वे रामनाथ से उस तिकड़म की बात बार-बार पूछने लगे तो रामनाथ ने अपनी प्रेम कहानी कुछ इस तरह से बयां करना शुरू किया| रामनाथ कहता है कि- मैंने उस लड़की से शादी करने के लिए सर्वप्रथम अपनी पत्नी को कुछ समय के लिये दिल्ली से गाजियाबाद शिफ्ट कर दिया और उसे बता दिया कि दिल्ली में सभी चीजे बहुत मंहगी हैं और यहाँ की आबो-हवा ठीक नहीं है| कुछ दिन पश्चात् दिल्ली के लोगों से यह बता दिया कि

मेरी पत्नी की तबियत सही नहीं है और डॉक्टर ने उसे आराम करने के लिए बोला है फिर कुछ दिनों के अंतराल के बाद रामनाथ ने लोगों को बता दिया कि पत्नी की तबियत ज्यादा खराब हो जाने के कारण उसकी मृत्यु हो गई| यह अफवाह फैलाने के बाद उसके पहले वाले ससुर ने ही मशवरा दिया कि कहीं दूसरी शादी कर लीजिये| अन्ततः उसकी शादी उसी लड़की से तय हो गई|

रामनाथ सुबह ही अपनी पत्नी के पास गाजियाबाद गया और उससे बताया कि मैं अपने दोस्त की शादी में जा रहा हूँ और तीन चार दिन में वापस आऊंगा| रामनाथ ने शादी में निमंत्रण बहुत ही खास-खास लोगों को दिया था जिससे कि भांडाफोड न हो जाए, लेकिन चोर कितना भी शातिर क्यों न हो, कहीं न कहीं गलती हो ही जाती है| रामनाथ ने अपने साले साहब को भी अपनी नयी शादी में शरीक होने के लिये बुलाया था| जैसे ही उसका साला दिल्ली पहुंचा तो पता चला कि बारात तो निकल चुकी है और वह दूसरी गाड़ी करके बारात में जाने के लिए प्रस्थान करता है| रास्ते में अत्यधिक प्यास लगने के कारण वह गाज़ियाबाद में गाड़ी रुकवाकर, एक दुकान पर पानी पीने के लिये जाता है| तभी वहां एक लड़का उससे कहता है कि वो आंटी छत पर से आपको बुला रही हैं| साले साहब ने ऊपर देखा तो उनकी आंखें खुली की खुली रह गयीं| वह तो एक दम से मेरी बहन लग रही है| ऐसा महसूस कर तुरंत उसके पास पहुंचे और सारी बात अपनी बहन को बताया| बहन को अत्यधिक गुस्सा आया

कि बताइये जिस पुरुष को मैंने अपना पति अपना देवता समझकर पूजा की, आज उसी पुरुष ने मुझे जिन्दा रहते हुए ही मार डाला और तो और वह मेरी सौतन को भी ब्याहने निकाल पड़ा है| हाय रे संसार! इस दुनिया में कौन किस पर भरोसा करे, सारी दुनिया ही झूठी है| इसी प्रकार का एक प्रसंग मुंशी प्रेमचन्द जी ने अपनी कहानी 'पत्नी से पति' में किया है, जहाँ पर स्त्री को मात्र निराशा ही हाथ लगी| "गोदावरी को रात भर नींद नहीं आयी थी, दुराशा और पराजय की कठिन यंत्रणा किसी कोड़े की तरह उसके हृदय पर पड़ रही थी| ऐसा मालूम होता था कि उसके कंठ में कोई कड़वी चीज अटक गई है| मिस्टर सेठ को अपने प्रभाव में लाने की उसने सब योजनाएँ की, जो एक रमणी कर सकती है, पर उस भले आदमी पर उसके सारे हाव-भाव, मृदु मुस्कान और वाणी-विलास का कोई असर न हुआ| खुद तो स्वदेशी वस्त्रों के व्यवहार करने पर क्या राजी होते, गोदावरी के लिए एक खद्दर की साड़ी लाने पर भी सहमत न हुए| यहाँ तक की गोदावरी ने उनसे कभी कोई चीज न मांगने की कसम खा ली|"[50]

इस तरह के प्रसंग हमें अक्सर कई लेखकों की कहानियों में अधिकांशतः देखने को मिल ही जाते हैं, जहाँ कि पति-पत्नी के रिश्ते में दरार या नफरत अथवा किसी पर स्त्री के कारण अपनी पत्नी से किनारा कर लेना इत्यादि तरह की घटनाएं हम अपने आस-पास सामाजिक जीवन में प्रायः देखते चले आ रहे हैं| वही हाल मिस्टर रामनाथ की जिंदगी का

भी था| वह अपनी पत्नी के रहते हुए भी एक कुंवारी लड़की से शादी करने के लिये आज बारात लेकर निकल चुका था। उसके साले और पत्नी ने तुरंत उस बारात में पहुंचकर, कुछ लोगों के साथ मिलकर अपने पति रामनाथ की हड्डी-पसली एक कर दी| इतना मारा-पीटा कि उसके सिर पर शादी का जो भूत सवार था वह तुरंत ही उतर गया| शादी में जब लड़की वालों को भी यह बात पता चली तो उन्होंने भी अपने हाथ साफ़ किये पर उन्हें यह खुशी हुई कि मेरी बेटी की लाज बच गयी नहीं तो इस दरिन्दे के साथ अपना जीवन नर्क कर बैठती| आनन-फानन में माहौल बिगड़ता देख रामनाथ के साले को ही दूल्हा बनाया गया और उस कुंवारी लड़की की शादी रामनाथ से न होकर उसके साले के साथ ही सम्पन्न हो गई| रामनाथ की सारी इज्जत हवा में उड़ गई| वह समाज में कहीं भी मुंह दिखाने लायक नहीं बचा| उसकी सारी तिकड़म बाजी निकल गई, क्योंकि वह अपने ही बुने जाल में बुरी तरह फंस गया था| उसके दोस्तों ने भी उसका बहुत मजाक उड़ाया| एक बात हमें हमेशा याद रखनी चाहिये कि यदि हम बुरा कार्य कर रहे हैं तो आगे आने वाले उसके दुष्परिणामों को भी भोगने के लिए हमेशा हमें तैयार रहना पड़ेगा, क्योंकि बुरे कर्म का फल हमेशा बुरा ही होता है| इसलिए हमें कभी भी गलत कार्य नहीं करना चाहिए|

बलदेव-

बलदेव रामनाथ के प्रमुख दोस्तों में से एक था| बलदेव रामनाथ का हर समय साथ देने के लिए तैयार रहता था परन्तु इस कहानी में इसके बारे में ज्यादा कुछ नहीं बताया गया है| सिर्फ रामनाथ के तिकड़मबाजी का आनन्द लेते दिखाया गया है| एक बार जब रामनाथ ने अपनी पत्नी के मर जाने की अफवाह फैलायी थी तब बलदेव ने रामनाथ की बड़ी सेवा की थी| वह बाज़ार से मिठाई लाकर उसे खिलाना चाहता था, उसे सिनेमा दिखाना चाहता था| परन्तु रामनाथ ने उससे कुछ भी लेना हराम समझा, क्योंकि रामनाथ को कोई असली दुःख नहीं था| बल्कि लोगों को दिखाने के लिए पत्नी के मर जाने पर उसने दुखी होने का नाटक किया था| उसकी एक्टिंग को देखकर बलदेव रामनाथ से कहता है कि "अरे जालिम तो ये सब तेरी एक्टिंग थी? यार, फिर तो किसी फिल्म में जाकर अभिनेता बनो| क्लर्की की कलम घिसने में क्या धरा है! मगर यार गजब की एक्टिंग थी| एक्टिंग नहीं थी, वह तिकड़म थी| रामनाथ ने गम्भीरता से कहा|"[51]

हज़रत रघुनाथ-

हज़रत रघुनाथ भी रामनाथ का प्रिय दोस्त था जो उसकी तिकड़मबाजी का भरपूर आनंद उठता है| रघुनाथ भी रामनाथ की सुख-सुविधा का भरपूर ध्यान रखता था| जब रामनाथ अपनी पत्नी की मृत्यु का समाचार पूरे दिल्ली में फैलाता है तो कुछ दिनों पश्चात् रघुनाथ ने ही

उसके पिताजी से रामनाथ तथा उस कुंवारी लड़की की शादी की बात चलाई थी पर उस समय रघुनाथ को यह बिल्कुल पता नहीं था कि रामनाथ एक्टिंग कर रहा है| जैसा कि "शादी की चर्चा चलती ही रही| पिताजी सिर खा रहे थे| मैं न-न कर रहा था| मगर मैंने पिताजी से दोस्त की साली की ओर इशारा कर दिया था| यह बैठे हैं हजरत रघुनाथ, कहते क्यों नहीं? पिताजी से खूब नमक-मिर्च लगाकर तुम्हीं ने तो उसकी चर्चा की थी|"[52]

इस तरह की बातें समाज में हमें अक्सर दिखाई पड़ती हैं| लोग अपने निजी स्वार्थ के वशीभूत होकर एक दूसरे को अत्यंत नीचा दिखाने का भरपूर प्रयास करते चले आ रहे हैं| पता नहीं आज की मनुष्य जाति अपने निजी स्वार्थ हेतु किसी को भी हानि या मृत्यु तक पहुँचाने में जरा सा भी संकोच नहीं करती। हम सबको अपनी सोच को इस कुण्ठित मानसिकता से ऊपर उठाना होगा तभी एक निःस्वार्थ, सेवा भावना से परिपूर्ण, भाई-भाई के प्रति सम्मान की भावना से युक्त एक नये आदर्श समाज की स्थापना हो सकेगी|

6- चौधरी-

इस कहानी में आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने बिजनौर इलाके के पहाड़ी क्षेत्र की संस्कृति को दर्शाते हुए एक ऐसे डकैत सरदार की जीवन गाथा को वर्णित किया है, जिसके आगे पूरे इलाके के लोग भय से थर-थर कांपते और उसका सम्मान भी करते थे| वह ऐसे लोगों को अपने

आस-पास रखता था जो उसके आदेश पर तत्क्षण कुछ भी करने को तैयार रहते थे| चौधरी 40 गांवों का सरपंच था और उसका यह नियम था कि यदि उस गाँव से कोई विदेशी गुजरता तो उसे चौधरी साहब का आतिथ्य सत्कार स्वीकार करना ही पड़ता था, क्योंकि यह चौधरी का कठोर नियम था| उसके गाँव में आने वाला कोई भी व्यक्ति, उनसे बिना सेवा लिए वापस जाने का साहस नहीं कर पाता था| इस कहानी के पुरुष पात्रों में मुख्य रूप से चौधरी सेढ़ू सिंह और शार्दूल सिंह हैं|

चौधरी सेढ़ू सिंह-

चौधरी सेढ़ू सिंह एक धार्मिक, न्यायप्रिय और संवेदनशील व्यक्ति थे| वे 40 गाँव के सरपंच थे और उनके गाँव में यदि कोई भी चाहे अमीर हो या गरीब सभी को उनका आतिथ्य स्वीकार करना परम आवश्यक था, क्योंकि "वह अतिथि चाहे भी जैसा दीन-हीन नगण्य होता, उसके निमित्त मिष्टान्न, भोजन, कथा-वार्ता, धर्म-प्रसंग, गान और आनंदोत्सव अनिवार्य रूप से होता ही था| ऐसा कोई दिन न आता जब दो चार अतिथि चौपाल की पलंग पर आसीन न हों| इस प्रकार चौधरी की हवेली में नित्य ही त्योहार रहता था, नित्य ही धर्म-कथा, रास और न जाने क्या- क्या? परन्तु चौधरी के प्रत्येक काम में श्रद्धा, धर्म का पुट रहता था|"[53]

यद्यपि चौधरी की आयु 70 वर्ष पार कर चुकी थी फिर भी उनको देखकर यह कोई नहीं कह सकता था कि चौधरी साहब की उम्र इतनी अधिक है| पर क्या मजाल था कि कभी भी चौधरी अपनी चौपाल से

गायब हुए हों| नित्य ही सुबह से लेकर रात्रि तक सारे कार्यों का समय निश्चित था| चालीस गांवों के छोटे-बड़े दीवानी-फौजदारी के मामले वे अपने हाथों ही भुगताते थे| उनके न्याय करने के किस्से पूरे गाँव में हवा की तरह फैले थे| उनके द्वारा दिया गया निर्णय हर किसी को मानना ही पड़ता था| क्या मजाल कि कोई भी विरोध करने का साहस कर सके जो कोई भी उनके निर्णय पर आपत्ति करता था उस पर मानों आपत्तियों का पहाड़ ही टूट पड़ता था। अंत में उसे आँखों में आंसू भरकर चौधरी दादा के पैरों में ही शरण लेने के सिवा दूसरा कोई रास्ता न बचता था| उनकी दहशत चालीस गांवों में बराबर बनी रहती थी| चौधरी साहब जितना इधर कठोर और तानाशाही शासन करते थे, उतना ही उधर भजन-कीर्तन, साधुओं की सेवा, सुरक्षा, गरीबों की मदद, परोपकार की भावनाओं से युक्त उनका हृदय हर क्षण एक-दूसरे की सेवा में तत्पर रहता था| जैसा कि ऊपर बताया गया है कि उनका हर कार्य सुबह से लेकर शाम तक निश्चित था| “वे भोर में ही उठकर नित्य कर्म से निपट स्नान कर शिवाले में आ पहर दिन चढ़े तक ध्यान भजन करते| फिर वहां से उठकर चौपाल में जा पंचायत के कजिए निपटाते, एक बजने पर वे भोजन करने वाली हवेली में जाते और चार बजे बाहर आते| इस समय वे गाँव का एक चक्कर लगाते| प्रत्येक के द्वार पर जा-जाकर, नाम लेकर, पुकारकर उसकी घर गिरस्ती, रोग, खेत खलिहान की तथा इधर-उधर की बातें करते| संध्या होते ही अतिथि सेवा, कथा-वार्ता और भजन कीर्तन चलता|

भोजन एक ही बार करते थे| कुछ लोग उन्हें देवता, कुछ देवता का अवतार, कुछ लोग योग-भ्रष्ट महात्मा समझते थे|"[54]

कभी- कभी लोग ये भ्रम खा जाते थे कि चौधरी को अच्छा इन्सान समझें या बुरा क्योंकि वह अच्छे के लिये बहुत अच्छे और बुरे के लिए बहुत बुरे थे| जब चौधरी की बेटी का ब्याह था तो पूरे चालीस गांवों के लोग तथा बराती सब मिलकर दस दिन तक लगातार उनके यहाँ खान-पान,मिठाई, रसगुल्ले इत्यादि का आनन्द लेते रहे| चौधरी के सामने वर-पक्ष के लोगों ने कई बार बारात विदा करने की बात कही, परन्तु चौधरी साहब ने जवाब दिया कि क्या हमारे यहाँ खाने का बन्दोबस्त नहीं है या आपके सम्मान में कुछ कमी हो रही है| इस पर दूल्हे के पिताजी बोले कि हमारे बराती कई दिनों से अपना घर-परिवार सब छोड़ के आये हैं| उनके घर पर अधिकांश कार्य रुके हुए हैं, बहुत उनका नुकसान हो रहा है तो चौधरी साहब ने हँसते हुए कहा कि आपके किस बराती का कितना नुकसान हुआ है सभी की लिस्ट बना कर मुझे दीजिये, उनकी पूरी भरपाई मैं अपने खजाने से करूँगा| इस बात के आगे भला कोई क्या जवाब दे पाता| बारात तब तक विदा नहीं हुई जब तक कि चौधरी साहब ने अपनी मर्जी से विदा नहीं किया|

शार्दूल सिंह-

ये चौधरी साहब के बहुत ही विश्वास पात्र थे| उनके हर कार्य में इनकी बहुत बड़ी भूमिका होती थी| खजाने लाना और राज्य भर की खबर देना इनका मुख्य कार्य था| पुलिस मुठभेड़ में गोली लगने के कारण इनकी मृत्यु हो गई, जिसके कारण चौधरी साहब को अत्यंत ही हृदयघात हुआ| उनके आंसू रोके नहीं रुक रहे थे| चौधरी के मुख से एक ही शब्द निकल रहा था कि आज हमने अपना सबसे कीमती हीरा खो दिया|

7- भाई की विदाई-

क्रांतिकारी दस्यु जीवन पर आधारित इस कहानी में कर्तव्यनिष्ठा और सुपवित्र प्रेम का सुन्दर निर्वाह हुआ है| पाठक पढ़ते-पढ़ते उसी में डूबता जाता है और भाव विभोर हो उठता है| कहानी का आरम्भ एक डींग-हाँकने वाले नये दरोगा के कारनामे से प्रारम्भ होती है परन्तु बड़ी-बड़ी बातें करने वाला दरोगा गुंडों को देखकर भीगी बिल्ली बन जाता है| पहले जब दरोगा जी नये डाल के टूटे थाने में आए थे तो “अधिकार की पुरानी बू दिमाग में थी, अफसरी की धौंस भी थी, ईश्वर की दया से मोटे-ताजे, गोरे-चिट्ठे खासे गबरू जवान थे| डींग-हांकना उनकी आदत थी| ठाकुर बताते थे, पता नहीं कुर्मी थे कि काछी, थाने में आते ही उन्होंने सिपाहियों पर रौब गांठना शुरू कर दिया|”[55]

दरोगा जी आये दिन सिपाहियों के सामने स्वयं को बहुत शक्तिशाली और बुद्धिमान तथा चालाक समझते थे| उनकी बहादुरी के

किस्से इतने प्रसिद्ध हो चुके थे कि वे उन सिपाहियों को जो गुंडों को नहीं पकड़ पाते थे उन्हें जुलाहा कहते थे| उनका मानना था कि वह थानेदार ही क्या जो डाकुओं को गिरफ्तार न कर सके| उस समय जब दरोगा जी थाने में आये तो उस समय कस्बों और गाँवों में एक प्रकार का आतंक फैला हुआ था| सभी जन घबराए-घबराए से रहते थे| उन्हें सदा इस बात का भय रहता था कि कब उनके घर पर डाकुओं का आक्रमण हो जायेगा, इसका कोई समय निश्चित न था, पर अक्सर रात में ही डाकू ग्राम वासियों के यहाँ लूट-पाट मचाते थे| उन डाकुओं में कुछ डाकू ऐसे थे जो कि पुलिस तक को कुछ नहीं समझते थे और उन्हें गोली से उड़ा देते थे| इसलिये पुलिस भी उन डाकुओं से भिड़ने के बजाय उनसे अक्सर बचने का प्रयास करती थी| पर ये ठहरे थे नये दरोगा जी जिनका अभी असली गुंडों से पाला ही नहीं पड़ा था, इसलिये कुछ ज्यादा ही भौंक रहे थे| इस कहानी के पुरुष पात्रों में दरोगा जी, मुंशी, लालाजी, कमालुद्दीन कांस्टेबिल, देवीसिंह (इलाके का प्रसिद्ध गुण्डा), गुलाम अहमद, गोपाल पाण्डे, रामदीन इत्यादि हैं|

दरोगा जी-

प्रस्तुत कहानी में दरोगा जी एक ऐसे पुरुष पात्र के रूप में चित्रित हैं जिनकी धाक थाने भर में जमी थी| सिपाहियों पर रौब जमाना तथा अपनी तारीफों के पुल बांधना और दूसरों को नीचा दिखाना उनका मुख्य उद्देश्य रहता था| थाने के कुछ नये सिपाही, जमादार इत्यादि तो उनकी

जी हुजूरी करते थे। जो पुराने और समझदार थे वे इनसे जरा भी लगाव नहीं रखते थे, परन्तु दरोगा जी अपने आपको 'तीस मार खां' ही समझते थे| जब गाँव में लालाजी के यहाँ गुण्डों ने 5000 रुपये की मांग की तो लालाजी सीधे दरोगा जी के पास शिकायत करने पहुंचे तथा उनसे अपने जान-माल की सुरक्षा हेतु याचना की| दरोगा जी उस समय तो बड़े ताव में आकर उसे उस डाकू को पकड़ने का आश्वासन देते हैं, परन्तु जब गुण्डों के हाथ में छः नला पिस्तौल देखा तो उनके भी छक्के छूट गये| तत्पश्चात उन्होंने कमालुद्दीन से विचार-विमर्श किया कि अब क्या करना चाहिए| गुण्डे को देखकर दरोगा जी की हालत ऐसी हो गई थी कि "दरोगा जी को पसीना आ गया| उन्होंने दबी जबान में कहा- कमालुद्दीन, मेरे जूते का फीता खोलो- फीता, मैं पेड़ पर चढ़ नहीं सकता, जल्दी| हुज़ूर खड़े मत रहिये लेट जाइये जल्दी, पेड़ पर चढ़िए| एक साइकिल और संई से निकल गई और सीटी की आवाज गूँज गई| दरोगा जी के शरीर से पनाला बह निकला|"[56]

दरोगा जी ने जब गुण्डों के हाथों में पिस्तौल तथा धारदार हथियार देखा तो वे डर से गए और अपनी जान को बचाना ही बेहतर समझा क्योंकि उनका मानना था कि यदि जान है तो जहान है| जान से बढ़कर नौकरी नहीं हो सकती| इस तरह जो दरोगा जी पहले बहुत बड़ी-बड़ी डींगे हांका करते थे, वे अपने सामने देवीसिंह जैसे शातिर गुंडे, बदमाश को देखकर भीगी बिल्ली बनते दिखाई पड़ते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि

जब तक मनुष्य कोई कार्य नहीं कर लेता तब तक उसके कार्य के विषय में हम सिर्फ अन्दाजा ही लगा सकते हैं जो उस कार्य पर सटीक बैठना ना बैठना उस कार्य की परिस्थिति पर निर्भर करता है|

लालाजी-

लालाजी एक धनी बनिया थे जिन्हें डाकू देवीसिंह लूटने के लिये पहले ही सूचित कर देता है और लूट से बचने के एवज में उससे 5000 रु. की मांग भी करता है| परन्तु लालाजी ने उसे 5000 रुपये देना मुनासिब ना समझा और थाने पहुंचकर दरोगा जी से अपनी सारी व्यथा बताना उचित समझा| लालाजी निहायत कंजूस और लालची व्यक्ति थे| वे अपने धन को बहुत अधिक महत्व देते थे| मगर समय पर डाकू देवीसिंह के बताए पते पर वे 5000 रु. ना पहुंचा पाये जिसकी वजह से उनके घर पर डकैतों ने धावा बोल दिया| पुलिस और दरोगा जी भी उन गुंडों को पकड़ने में नाकाम रहे| इस कहानी में लालाजी, दरोगा जी के मुंशी को 100 रुपये घूस भी देते दिखाई पड़ते हैं| यह घूस लालाजी ने अपने घर पर डाकुओं के आक्रमण से बचने के लिए दिये थे, पर डाकुओं के हाथ में पिस्तौल देखकर पुलिस भी पीछे छिप गई और डाकू अपने कार्य को पूर्ण रूप से अंजाम देने में सफल हो गये|

कमालुद्दीन-

कमालुद्दीन दरोगा जी के थाने में एक कांस्टेबिल था परन्तु यह निहायत ईमानदार, साहसी, चालाक, निडर और बुद्धिमान था| दरोगा जी पहले डाकुओं के सम्पर्क से या उनकी ताकतों से तो अनभिज्ञ थे, जिसके कारण वे कुछ ज्यादा ही बहादुरी दिखाते थे| उन्हें डाकुओं को पकड़ना बाँए हाथ का खेल लगता था, मगर जब कमालुद्दीन ने उनसे डाकुओं के भयंकर और खतरनाक कार्यों के विषय में बताया तो भी दरोगा जी को उनसे भय ना लगा परन्तु जब लाला जी के घर पर डकैती के समय दरोगा जी ने देवीसिंह तथा अन्य डाकुओं को देखा तब से दरोगा जी को थोड़ी-थोड़ी अपनी ताकत पर से भरोसा उठने लगा| कमालुद्दीन तब उन्हें सच्चाई से अवगत कराते हुए कहता है कि "हुज़ूर आपके बाल-बच्चे हैं, आप नौजवान हैं, नौकरी में पेट भरने जितनी तनखा मिलती है, जान देने जितनी नहीं, आप पहली बार मुहिम पर आए हैं, वे लोग पक्के खलाड़ी हैं| आप मतलब से मतलब रखिये वरना यहाँ से जीता-जगता लौटना मुश्किल है|"[57]

यह सब सुनकर दरोगा जी की आँखें खुल गईं। उन्हें अपना घर-परिवार तथा जान सलामती की फ़िक्र होने लगी और उन्होंने डाकुओं से लोहा लेने का विचार बदल दिया| प्रायः हमारे समाज में कई बार ऐसी घटनाएँ देखने को मिलती हैं।

देवीसिंह-

देवीसिंह इलाके का प्रसिद्ध डाकू था जिससे सभी लोग थर्राते थे| उसकी आवाज सुनकर ही लोग सहम जाते थे| वह आये दिन किसी न किसी के घर में डाका डालता ही रहता था, पर किसी में भी इतनी हिम्मत नहीं थी कि उसे पकड़ सके| देवीसिंह के अन्दर भले ही लाख बुराइयाँ रही हों परन्तु उसके अन्दर एक बहुत बड़ी अच्छाई यह थी कि वह चोरी, डकैती, लूट-पाट के पैसे कभी अपने पास नहीं रखता था| वह सारा खजाना गरीबों, असहायों, निर्बल, दीन-दुखियारों में बाँट देता था| कभी किसी महिला पर अत्याचार होते हुए अपनी आँखों से नहीं देख सकता था| इस बात की पुष्टि इस बात से हो जाती है कि जब देवीसिंह अपने साथियों समेत लालाजी के घर पर डाका डालता है तो उसका ही एक साथी उस घर की कृष्णा नामक युवती के साथ अभद्र व्यवहार करने लगा जो कि अमानवीय कृत्य था| जब उस युवती की चीख देवीसिंह के कानों तक पहुंची तो वह घबरा गया| युवती की चीख सुनकर वह तुरंत ही छत पर से कूद पड़ा और आँगन में बैठे युवती के माता-पिता के पास पहुंचकर पूछता है कि यह आवाज किसकी है? तब बूढ़े माता-पिता ने उसे बताया कि यह चीखने वाली युवती मेरी बेटी है और तुम्हारा ही कोई साथी उसके साथ गलत कार्य करने की कोशिश कर रहा है| यह सुनते ही डाकू देवीसिंह लपककर उस कमरे में पहुंचा जहाँ पर वह बदमाश साथी, युवती के साथ अभद्र व्यवहार कर रहा था| देवीसिंह ने तुरन्त ही अपनी

गोली से उस बदमाश की खोपड़ी को उड़ा दिया| युवती यह सब देखकर दंग रह गई कि यह क्या हो गया| डाकू देवीसिंह ने एक युवती को बचाने की खातिर अपने ही साथी पर गोली चला दी| वह एकदम से यह दृश्य देखकर काँप उठी। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि कोई डाकू किसी घर में चोरी -डकैती करने आये और वह लूट-पाट छोड़कर अपने साथी को बचाने के बजाय, उसके सर को ही गोली से उड़ा देगा। जैसा कि “नायक बिजली की भांति लपककर वहां पहुंचा! देखा एक किशोरी बालिका धरती पर बदहवास पड़ी है| उसके मुंह में कपड़ा ठुंसा है और वस्त्र अस्त-व्यस्त हो रहे हैं| एक डाकू उसके साथ पाशविक कर्म करना चाहता है| बालिका इस अवस्था में भी छटपटा रही है| डाकू के सावधान होने से प्रथम ही नायक की गोली ने उसकी खोपड़ी को चकना चूर कर दिया और वह पृथ्वी पर गिर पड़ा|”[58]

डाकू देवीसिंह अपने साथी को मारने के बाद उस युवती से उसके कुकृत्य के लिए क्षमा मांगता है और उसे अपनी बहन बनाता है| वह कहता है कि हे! बहिन यह अपराधी तो क्षमा के भी लायक नहीं था पर हो सके तो मुझे माफ़ कर देना| यह कहकर उसने अपने साथियों को आदेश दिया कि लूट-पाट का सारा सामान वापस कर दो| हम यहाँ से कुछ नहीं ले जायेंगे| युवती ने कहा जब तुम इतने ही दयावान और सहृदय हो तो फिर क्यों इस तरह के गलत कार्य करते हो? क्या तुम्हें ऐसा करते हुए शर्म नहीं आती| तब डाकू देवीसिंह ने बताया कि हे! बहिन

मैं इस अभागे देश के लिये ही इस तरह का काम करता हूँ क्योंकि मैं इस लूट का सारा खजाना गरीब जनता में बाँट देता हूँ| इसमें से एक पाई भी लेना गो-मांस के समान है| इस पर वह युवती देवीसिंह से कहती है कि “ऐसे भले हो तो यह काम क्यों करते हो? बालिका के होंठ कांपने लगे| युवक ने कहा- बहिन, यह सब इस अभागे देश के लिए, जिसके लिए हमने प्राण और शरीर दे दिया है| इस धन का खरीदा हुआ अन्न का एक दाना भी हमारे लिये गो मांस के समान है, हम निरुपाय होकर ही यह सब करते हैं| फिर इसे क्यों मार डाला? इस पापी का अपराध इससे भी अधिक था| यह दण्ड पाकर भी अभी पाप से उन्मुक्त नहीं हुआ- जब तक तुम क्षमा न करो| इसने हमारे दल को छिन्न-भिन्न कर दिया| पृथ्वी भर की स्त्रियाँ हमारी बहिन हैं| यह तो हमारा व्रत है|”[59]

यहाँ पर यह देखा जा सकता है कि एक डाकू का हृदय भी परिस्थिति के अनुसार कितना बदल जाता है| कोई कुछ भी कहता हो लेकिन सत्य बात यही है कि अच्छे-बुरे इंसान दुनिया में हर जगह मौजूद हैं| हर क्षेत्र में कहीं अच्छे तो कहीं बुरे व्यक्ति दिखाई पड़ेंगे, परन्तु एक डाकू का इस तरह हृदय परिवर्तन हमारी भारतीय संस्कृति में अक्सर देखने को मिल जाता है| इतना ही नहीं वह युवती उस युवक को अपना भाई मानकर, उसके पापी साथी को क्षमा कर देती है और देवीसिंह को अपनी शादी में जरूर आने के लिए कहती है| अंत समय में उस डाकू को किसी जुर्म में फांसी की सजा हो जाती है, परन्तु वह अपनी बहन को

दिये हुए वचन को निभाने के लिए अपने एक अन्य साथी के हाथ से कुछ रुपए और एक सन्देश भेजता है| उसका साथी उस बहन के पास जाकर सारी बातें बताता है| यह सुनकर युवती (कृष्णा) शादी करने से इनकार कर देती है, परन्तु वह साथी जब बताता है कि कल सुबह तुम्हारे भाई (डाकू देवीसिंह) को फांसी होने वाली है तो क्या तुम चाहोगी कि वे रोते-रोते फांसी पर झूलें| उनकी दिली इच्छा यही है कि वे तुम्हारी शादी होने के पश्चात ही फांसी पर चढ़ें| जैसा कि “युवक ने सर झुका कर कहा तुम्हारी आज्ञा मैं टाल नहीं सकता बहिन, उन्हें फांसी की सजा हो गई है| बालिका आंखें कर देखने लगी उसके मुंह से बोल न निकला| युवक ने दूसरी ओर मुंह फेरकर कहा- कल प्रातःकाल पांच बजे उन्हें फांसी होगी| आज का मंगल कार्य समाप्त होने के लिए ही उन्होंने एक सप्ताह की अवधि ली थी|”[60]

आचार्य चतुरसेन शास्त्री जी ने जिस प्रकार से प्रस्तुत कहानी में एक गुण्डे के माध्यम से हृदय परिवर्तन व सामाजिक परिवर्तन पर प्रकाश डाला है, उसी प्रकार से अधिकांश लेखकों ने भी अपनी कहानियों में कुछ इस तरह के गुंडों, चोरों, डकैतों तथा बदमाशों का जिक्र किया है| हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकार ‘जयशंकर प्रसाद’ जी ने भी अपनी एक कहानी ‘गुण्डा’ नाम से लिखी है जिसमें उन्होंने इस विषय पर काफी चर्चा की है| गुंडा नामक कहानी में वे गुंडा ‘नन्हकू सिंह’ का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि “जीवन की किसी अलभ्य अभिलाषा से वंचित होकर जैसे प्रायः लोग

विरक्त हो जाते हैं, ठीक उसी तरह किसी मानसिक चोट से घायल होकर एक प्रतिष्ठित जमीदार का पुत्र होने पर भी नन्हकू सिंह गुंडा हो गया था| दोनों हाथ से उसने अपनी संपत्ति लुटाई| नन्हकू सिंह ने बहुत सा रुपया खर्च करके जैसा स्वांग खेला था, उसे काशी वाले बहुत दिनों तक नहीं भूल सके|”[61]

इसी प्रकार देवीसिंह भी भले ही लोगों की निगाह में गलत कार्य करता था परन्तु उसने अपने इस पेशे के द्वारा कमाई गई सारी दौलत को ‘जनता की सेवा’ मजदूरों, असहायों, गरीबों आदि के कल्याणार्थ खर्च किया| देवीसिंह के कार्यों से जहाँ कुछ लोग दुखी थे, वहीं पर अधिकांश जन उसके द्वारा अर्जित धन से अपने जीवन की कठिन गाड़ी को खींच रहे थे| उसके पैसे के द्वारा ही ना जाने कितने परिवारों का भरण-पोषण भी होता था| देवीसिंह एक ऐसा डाकू था जिसने न जाने कितने लोगों को मौत के घाट उतारा था, पर जितने लोगों को भी उसने सजा दी थी, वह सब के सब या तो अपराधी थे या किसी के साथ अभद्र व्यवहार करने वाले थे| कहानी में जब कृष्णा नामक युवती के साथ उसका एक साथी अभद्र व्यवहार कर रहा था तो देवीसिंह उसे गोली से उड़ा देता है| उसके लिए हर अपराधी एक समान था| कृष्णा नामक युवती की शादी में पहुंचने का वचन देने के कारण अपनी फांसी की सजा को वह विनती और मन्नतें करके अपनी मानी हुई बहन कृष्णा की शादी तक रुकवा लेता है ताकि उस बहन से किया हुआ वादा वह पूरा कर सके| कुल

मिलाकर देवीसिंह दुश्मनों के लिए दुश्मन, मित्रों के लिए मित्र, अच्छे के लिए अच्छा और बुरों के लिए बुरा था|

8- तस्वीर-

यह कहानी आचार्य जी की एक प्रसिद्ध कहानियों में से एक है| यह कहानी हमारी संस्कृति, सभ्यता एवं हमारे संस्कारों को बढ़ावा देती है| प्राचीन संस्कृतियाँ किस प्रकार से आज भी हमारे समाज, परिवार तथा हममें जीवित हैं इसका सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है| फोटोग्राफी पर आधारित यह कहानी हमारे जीवन को उन्नतिशील बनाने हेतु सन्देश देती है| ऐसा सन्देश जो हमारे जीवन मूल्यों में वृद्धि करती हुई दिखाई पड़ती है| इस कहानी में एक ऐसा ही फोटोग्राफी और कला के बीच संवाद चलता दिखाई पड़ता है| फोटोग्राफी को लेकर हुई बहस में एक फोटोग्राफर का 36 हज़ार रुपये खर्च हो जाता है और तो और न जाने कितने महीने समय की बर्बादी होती है अलग से| जैसा कि समाज में प्रायः देखा जाता है कि कोई व्यक्ति भले ही आम तौर पर कोई कार्य न करना चाहता हो, परन्तु जब कोई शर्त या बाजी लग जाती है तब उक्त कार्य को मजबूरन या खुशी पूर्वक हर परिस्थिति में पूरा करना आवश्यक हो जाता है, क्योंकि अपनी मान-मर्यादा, प्राण-प्रतिष्ठा आदि की रक्षा करना आवश्यक हो जाता है| प्रस्तुत कहानी में पुरुष पात्रों में मिस्टर भरूचा, मिस्टर वेदवार, डॉ गोयल और सर भाजल भाई प्रमुख हैं|

मिस्टर भरूचा-

मिस्टर भरूचा एक ऐसे व्यक्ति थे जो निहायत सीधे-साधे, खुशदिल मिजाज, परोपकारी स्वभाव, मिलनसार, एक दूसरे के दुःख में दुखी तथा सुख में सुखी रहने वाले व्यक्ति थे| उनमें एक खास बात यह थी कि यदि उनसे कोई बहस करता या उनका अपमान करता तो वह उससे बदला ज़रूर लेते थे| हालांकि उनके शरीर की बनावट बहुत अच्छी नहीं थी जिससे आये दिन कोई न कोई उनका मजाक बना ही लेता था| उनके शारीरिक बनावट के विषय में आचार्य जी लिखते हैं कि "मिस्टर भरूचा एक अजीब लमढीक आदमी थे| दोनों गालों की हड्डियाँ उभरी हुईं, एक आंख छोटी, एक बड़ी, खिचड़ी व मोटे-मोटे सूअर के से बाल, बेतरतीबी से छितराई हुई मूछें, ढीला और लापरवाही से बदन पर डाला हुआ सूट| अब कहिये उनकी तस्वीर मिस्टर वेदवार खींच कैसे सकते थे?"[62]

कुल मिलाकर मिस्टर भरूचा की शारीरिक बनावट भले ही बेडौल थीं, परन्तु उनका आतंरिक स्वभाव उतना ही सभ्य और सामाजिक था| मिस्टर वेदवार ने जब उनकी तस्वीर उतारने से इनकार कर दिया तो वे बदले की भावना से कला और फोटोग्राफी में फर्क बताते हुए मिस्टर वेदवार से कहते हैं कि "फोटोग्राफी चाहे जितनी भी उन्नति कर ले, यह चित्रकला नहीं कहला सकती| चित्रकला एक महान कला है| कला का विकास मस्तिष्क से होता है जिसमें जीवित विचार होते हैं, मशीन से नहीं, जिसमें सिर्फ छाया को ही अंकित किया जा सकता है| फोटो तो

सिर्फ उन चीजों की छाया उतार सकता है, जिन्हें अपनी आँखों से देखा जा सकता है, परन्तु चित्रकला चलते फिरते विचारों की रूप-रेखा है|"[63]

कहने का तात्पर्य यह है कि चित्रकला एक ऐसा विषय होता है जिसमें जीवित विचार आते हैं जबकि फोटोग्राफी में केवल हम उन्हीं चीजों की छाया उतार सकते हैं, जिसे अपनी आँखों से हम देख सकते हैं| चित्रकला में हम अपनी कल्पना के द्वारा उन अमूर्त चीजों की भी छाया उतार सकते हैं और जैसा चाहते हैं उसे वैसा रूप दे सकते हैं| मिस्टर भरूचा एक बार जब अपने फोटोग्राफर मित्र, मिस्टर वेदवार से अपनी तस्वीर खींचने के लिए कहते हैं तो वे उनका मजाक उड़ाते हुए तस्वीर उतारने से मना कर देते हैं और सभी मित्रों के सामने उनको अपमानित करते हुए कहते हैं कि "जाइये-जाइये, लड़कों को फिलासफी पढ़ाइए और बीवी के हाथ पर हर महीने पांच सौ रुपए गिन दिया कीजिये, उन लोगों की नजर में और जंच जायेंगे| मगर आप फोटो खिंचवाने की हिमाकत न कीजिये| इससे कला दूषित हो जाएगी|"[64]

एक कलाकार होकर किसी भी व्यक्ति को इस तरह से अपमानित करना कहाँ तक सही है? यही वजह है कि मिस्टर भरूचा ने चित्रकला के महत्व को मिस्टर वेदवार के सामने बड़े जोश और तन्मयता के साथ बताया| मिस्टर वेदवार समझ गये कि मैंने मिस्टर भरूचा की तस्वीर न उतारकर गलती कर दी है परन्तु ये तो प्रकृति थी| ऐसा वे सभी के साथ

करते थे, जिसको वे खूबसूरत और अच्छा समझते थे, उसकी तस्वीर हूबहू उतार देते थे|

वेदवार-

मिस्टर वेदवार एक ऐसे व्यक्ति थे जो निहायत सनकी स्वभाव के थे| फोटोग्राफी करना उनका कोई पेशेवर कार्य नहीं था क्योंकि वे फोटोग्राफी केवल अपने शौक को पूरा करने के लिए करते थे| फोटोग्राफी सीखना उनकी एक महान इच्छा थी, जिसे पूरा करने के लिए न जाने उन्होंने कितना रुपया खर्च किया होगा| उनके अन्दर फोटोग्राफी की एक सनक पैदा हो गई थी। इस शौक को पूरा करने के लिए वे इटली, जर्मनी, जापान, रूस और न जाने कहाँ-कहाँ की खाक छान कर आए थे| उन जैसा फोटोग्राफर उन दिनों पूरे मुंबई शहर में नहीं था मगर मिस्टर वेदवार एक ऐसे फोटोग्राफर थे जो पुरुषों की फोटो खींचना ही नहीं चाहते थे| अक्सर पुरुषों को वे कोई न कोई बहाना बनाकर लौटा देते थे| उनका मानना था कि "पुरुष सोचने, विचारने और काम करने का जानवर है, फोटो उतरवाने का नहीं| स्त्रियों की वह लता से उपमा दिया करते थे| उनका कहना था, जैसे लता बिना सहारे खड़ी नहीं हो सकती, जैसे लता में कोमलता, मरोड़, मृदुल माधुर्य और शोभा है, वैसी ही स्त्रियों में है|"[65]

मिस्टर वेदवार पुरुषों की फोटो निकालने के लिए विभिन्न प्रकार के बहाने बनाते थे| कितने लोगों को तो साफ-साफ मना कर देते थे कि तुम्हारे शरीर के आकार-प्रकार उचित नहीं है। अतः फोटो साफ नहीं

निकलेगी और हमारी कला का अपमान होगा, परन्तु वहीँ पर स्त्रियों की फोटो निकालने में अक्सर कम ही स्त्रियों को मना करते थे, क्योंकि स्त्रियों को वे कोमल और मृदुल माधुर्य लता की तरह समझते थे| जैसे लता बिना किसी सहारे के नहीं खड़ी हो सकती उसी प्रकार से वे स्त्रियों की फोटो निकालने के लिए उनको सीधा-सीधा खड़े न करके बल्कि विभिन्न गतिविधियों को अपनाते हुए कई स्टेप में फोटो निकालते थे| फोटो भी लता की तरह किसी न किसी के सहारे स्त्रियों को खड़ा करके उनकी फोटो निकालते थे| वे स्त्रियों से ऐसी-ऐसी बातें करते थे और तरह-तरह से उनको खड़े होने के लिए कहते थे, जिससे अक्सर स्त्रियाँ नाराज हो जाती थीं, परन्तु वे स्त्रियाँ उनको कुछ कह नहीं पाती थीं, क्योंकि इसके दो प्रमुख कारण थे-

(1) पहला कारण तो यह था कि उनके अलावा पूरे मुंबई में इस तरह की फैशनबुल सुंदरियों की फोटो कोई और फोटोग्राफर नहीं निकाल पाता था|

(2) दूसरा कारण यह था कि मिस्टर वेदवार एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति थे, जिससे कोई भी स्त्री उनको गलत नहीं समझती थी | यहीं यदि वे एक युवा व्यक्ति होते तो न जाने कितने लोगों के हाथों उनकी पिटाई हो गई होती| स्त्रियाँ भले ही उनको कुछ नहीं कह पाती थी, मगर अन्दर ही अन्दर गालियाँ बहुत देती थी, क्योंकि वे उन स्त्रियों की अच्छी और स्टाईल दार फोटो खींचने के लिए जंगल- जंगल ले जाते थे| यद्यपि मिस्टर वेदवार एक बहुत ऊँचे और उच्चकोटि के फोटोग्राफर थे लेकिन

फिर भी स्त्री और पुरुष दोनों ही उनके सामने फोटो खिचवाने में घबराते थे जबकि वे किसी से रुपया-पैसा लेते ही नहीं थे, परन्तु जो भी फोटो निकलवाने उनके पास आता उसको हलाक कर देते थे| स्त्रियाँ जब उनके पास इस प्रकार आतीं तो वे उनको बड़ी देर तक घूर-घूरकर ऊपर से नीचे तक देखते| तमाम प्रकार की उनके क्रियाकलापों में बुराइयाँ थीं मगर उनकी उम्र उन सब बुराइयों पर पर्दा डालने का काम करती थी| मिस्टर वेदवार को अपनी कला पर अत्यधिक नाज था| वे कहते थे कि चित्रकला के समान ही हर तरह के विचार प्रधान और ख्यालात की तस्वीर हम निकाल सकते हैं जिसके कारण कभी-कभी अन्य लोगों से बहस भी हो जाया करती थी| कुछ इसी प्रकार 'वृन्दावन लाल वर्मा' अपनी कहानी 'कलाकार का दंड' में एक 'अंतक' नाम के यवन की कलाकारी को दर्शाते हुए लिखते हैं कि"अंतक यवन था, यूनानी| अपने पिता के समय से उज्जयिनी का निवासी था, स्थापत्य और वास्तुकला का जानकार| परन्तु उसकी बनाई हुई मूर्तियाँ बिकती बहुत कम थीं, इसलिए वह जंगली पशुओं के प्रतिबिंब बनाकर अपना जीवन यापन करने लगा तो भी सुन्दर स्त्री-पुरुषों की मूर्तियाँ बनाने की कामना बिल्कुल कुंठित नहीं हुई थी| उसने अपने बचे-खुचे समय में से अवकाश निकाल-निकाल कर अपने देवता अपोलो की पीतल की मूर्ति बनाई| पीतल को उसने ऐसा चमत्कार दिया कि वह स्वर्ण सा मालूम पड़ता था| विक्रमादित्य के कान तक इस मूर्ति की प्रशंसा पहुँच गई|"[66]

चित्रकला हो या फोटोग्राफी अथवा स्थापत्य कला सभी का अपने आप में महत्वपूर्ण स्थान है|

डॉक्टर गोयल-

डॉक्टर गोयल भी मिस्टर भरूचा तथा मिस्टर वेदवार के मित्र ही थे| जिस तरह से मिस्टर भरूचा का अपमान वेदवार ने किया था, उसी प्रकार से डॉ गोयल को भी वे अपमानित कर चुके थे| जब मिस्टर भरूचा ने चित्रकला को सर्वोच्च स्थान प्रदान करते हुए उसकी कई अच्छाइयाँ बताईं तथा फोटोग्राफी को उसकी अपेक्षा कम महत्व का बताया तो डॉ. गोयल ने भी मिस्टर भरुचा की हाँ में हाँ मिलाई और मिस्टर वेदवार को नीचा दिखाने का प्रयास किया| प्रस्तुत कहानी में वैसे तो डॉ गोयल का कोई विशेष रोल नहीं दिखाई पड़ता, परन्तु अपनी भड़ांस निकालते वक्त उनका थोड़ा सा परिचय मिल जाता है| बहती गंगा में हाथ धोने में डॉ गोयल मशहूर तो थे ही, तभी तो जब मिस्टर भरूचा अपने अपमान का बदला उनकी फोटोग्राफी के महत्व को कम आंककर, चित्रकला को अत्यधिक महत्व देते हैं तो डॉ. गोयल तुरंत उनकी हाँ में हाँ मिलाते हुए स्वीकार कर लेते हैं|

सर फाजल भाई-

यह एक ऐसे पुरुष पात्र हैं जिन्होंने अपनी ताकत और बुद्धि के बल पर मिस्टर वेदवार को एक ऐसी शर्त में फंसा दिया, जिसे पूरी करने में मिस्टर वेदवार के पसीने छूट गए और महीनों से ज्यादा उनका समय

बर्बाद हुआ सो अलग| एक बार सर फाजल भाई ने मिस्टर वेदवार से कहा कि क्या आप ख्यालात की भी तस्वीर खींच सकते हैं तो उन्होंने बड़ी ही उत्तेजना के साथ उत्तर दिया कि मैं हर प्रकार की तस्वीर निकालने में माहिर हूँ| तत्पश्चात सर फाजल भाई एकदम तैश में आकर बोले- यदि आप मेरे एक शेर का फोटो खींच सकें तो मैं आपको मुंह माँगा दाम दूंगा| फिर क्या था मिस्टर वेदवार ने वह शेर अपनी डायरी में लिखवाकर छः महीने के अन्दर उस तस्वीर को देने की बात कही| उस शेर का आशय कुछ इस प्रकार था "वह शेर औरंगजेब की बेटी जेबुन्निशा का एक प्रसिद्ध शेर था| वह शेर फव्वारे के उछलते हुए जल को लक्ष्य कर पढ़ा गया था| उसका अभिप्राय यह था- तेरी भौंहों में बल पड़े हुए हैं, तू गुस्से से ताव-पेंच खाकर ऊपर उठता है और पत्थर पर सिर दे-दे मारता है, तेरे दिल में ऐसा क्या दर्द है, तेरी प्रकृति ठंडी है और स्वभाव शांत|"[67]

इस तस्वीर को इसी भाव भंगिमा के साथ उतारने के लिए मिस्टर वेदवार ने बम्बई से पंजाब और कश्मीर तक की यात्रा करने की ठानी| वे कई प्रदेशों में घूमते हुए, दिल्ली पंजाब के पश्चात कश्मीर पहुंचे| वहां पर जब शालामार बाग में पहुंचे तब उन्हें उस तस्वीर के लिए उपयुक्त जगह और वातावरण मिलता दिखाई पड़ा मगर यह एक ऐसी तस्वीर निकालने की शर्त थी, जिसमें बिल्कुल जेबुन्निशा की तरह कोई युवती उस फव्वारे के पास बैठी हो, जिसके लिए उन्होंने एक जज की बेटी को हाथ-पैर जोड़कर वहां पर किसी प्रकार से सहमत किया| कई महीनों लम्बी मेहनत

और मशक्कत के बाद वे शर्तानुसार तस्वीर उतारने में सफल हुए| इस कार्य को पूर्ण अंजाम तक पहुँचाने में तकरीबन उनके 36 हजार रुपये खर्च हो गये| यह रकम तो बहुत ही बड़ी थी परन्तु शर्त को पूरी करने तथा अपनी इज्जत बचाने की खातिर मिस्टर वेदवार ने सभी परीक्षाओं को किसी न किसी प्रकार से पास किया और उक्त तस्वीर को लेकर सर फाजल भाई के पास आए| सब लोगों ने उस तस्वीर की बेहद सराहना की| बम्बई के सभी कलाकारों को बुलाया गया और उस शेर के मुताबिक बनी इस तस्वीर की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई| सर फाजल भाई ने जब इस तस्वीर की कीमत पूछी तो मिस्टर वेदवार ने एक ठंडी साँस लेकर बड़ी गंभीरता के साथ कहा- वैसे तो इस तस्वीर का कोई मूल्य नहीं बल्कि यह अमूल्य है मगर चूँकि आपसे वादा कर चुका हूँ इसलिए जितनी लागत लगी है उतनी ही आप दे दें तो बड़ी कृपा होगी| इस तस्वीर को हूबहू उतारने में मुझे 36 हजार रूपया खर्च करना पड़ा है, वही दे दीजिए बस|

9- मूल्य-

इस कहानी में लेखक ने जीवन के मूल्यों को उद्‌घाटित किया है। लेखक का यह कहना है कि पैसा ही सब कुछ नहीं होता है, उसके लिए इंसान के दिल में प्रेम का होना अति आवश्यक है। यह एक ऐसी कहानी है जिसमें एक युवक और युवती दोनों की शादी तो पूरे विधि-विधान से होती है परन्तु युवती पत्नी बन जाने के पश्चात भी युवक को अपना

पति मानने को तैयार नहीं होती| एक ही घर में रहने के बाद भी वह अपने पति नवीन से कटी-कटी सी रहती है| ऐसी भी क्या मजबूरी थी कि शादी के कई महीनों के बाद भी वह उनकी तरफ प्यार से देखना तक नहीं चाहती थी? दरसल बात ऐसी थी कि अमला की शादी, शादी न होकर के एक मजबूरी थी, एक प्रकार की सौदेबाजी थी जिसके बदले उसे नवीन के हाथों बेचा गया था| अमला के पिता ने पाँच लाख रुपये नवीन से कर्ज के रूप में लिया था। वह कर्ज उतारने में सफल न हुए और उनकी हालत अत्यधिक दयनीय होती गई| वे रात-दिन कर्ज उतारने के उपाय में डूबे रहते थे पर उन्हें कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था| उधर उनकी बेटी अमला भी धीरे-धीरे M.A. पास करके घर में खाली बैठी थी। उसकी शादी की भी अब उम्र हो गई थी| पिताजी यह नहीं सोच पा रहे थे कि वे पहले अपनी पुत्री की शादी करें या नवीन के कर्ज को उतारें| अंततः वे अपनी पुत्री अमला की शादी उस नवीन से कर देते हैं| नवीन ने शर्तानुसार उनके सारे कर्ज को माफ़ कर दिया| इस कहानी के पुरुष पात्रों में नवीन, मिस्टर राबर्ट प्रमुख हैं|

नवीन-

प्रस्तुत कहानी में नवीन एक बहुत ही अमीर और नेक इंसान के रूप में उभरकर सामने आता है| हालांकि उसकी उम्र अपनी होने वाली पत्नी अमला से थोड़ी अधिक थी| उसका कसूर सिर्फ इतना ही था कि उसने अमला के पिता को कर्ज के रूप में पाँच लाख रुपये दिए थे मगर

अमला के पिता उस रुपये को वापस नहीं कर पा रहे थे| धीरे-धीरे उनकी बेटी अमला भी अपनी पढ़ाई पूरी करके घर पर बैठ चुकी थी। आगे की पढ़ाई के लिए न तो उसके पिता के पास पैसे बचे थे और न ही उसकी शादी के लिये उनके पास कुछ शेष था| ऊपर से 5 लाख रुपए नवीन का कर्ज भी उतारना बहुत जरूरी था| पिताजी इसी कशमकश में मरे जा रहे थे कि अब क्या किया जाए? एक दिन नवीन अपने पांच लाख रुपये मांगने हेतु अमला के पिता के पास पहुँचता है। काफी मांगने के पश्चात भी अमला के पिताजी पैसे वापस करने में असमर्थता जाहिर करते हैं| तब हर तरफ से निराश नवीन को लगा कि उसके पैसे कहीं डूब न जाए, इसलिए अमला के पिता को वह एक राय देता है और कहता है कि यदि आप पांच लाख रुपये लौटाने में असमर्थ हैं तो आप अपनी पुत्री का हाथ मेरे हाथ में दे दीजिए मैं आपका सारा कर्ज माफ कर दूंगा| पिताजी ने काफी सोच-विचार के पश्चात नवीन से अमला की शादी करने के लिए हामी भर देते हैं| उचित समय देखकर दोनों का शुभ घड़ी में विवाह हो जाता है परन्तु सब कुछ विधि- विधान से होने के बाद भी नवीन की पत्नी अमला को कभी यह महसूस ही नहीं होता कि उसकी शादी नवीन से हो चुकी है| उसे तो यही लग रहा था कि उसका सौदा हुआ है| वह पांच लाख रुपये में बेच दी गई है, उसका स्वाभिमान यह कभी मानने को तैयार ही नहीं हुआ कि उसकी शादी हुई है| उसे हर पल यही लग रहा था कि उसके साथ सिर्फ और सिर्फ सौदे-बाजी हुई है| वह कभी भी नवीन से

शादी न करती यदि उसके पिता के पास कर्ज स्वरूप नवीन का कोई पैसा उधार न होता|

शादी के पश्चात नवीन अपनी पत्नी अमला की हर सुख-सुविधा का बखूबी ध्यान रखता था| हर शाम उसे घुमाने ले जाता था कि शायद उसका मन लगने लगे और मुझे पति रूप में स्वीकार कर ले| अमला ने केवल पिताजी की आज्ञा का पालन करने हेतु ही, अपनी मर्जी न होते हुए भी नवीन से शादी करने का फैसला सुनाया था| धन-सम्पत्ति सब कुछ होने के बाद भी अमला को नवीन के उस नये महल में अच्छा नहीं लगता था| वह सोचती थी कि यह विशाल महल और अटूट सम्पत्ति उसी की है पर वह उसे हठ पूर्वक पराई समझ रही थी| वह सब कुछ होते हुए भी, कुछ भी उपयोग नहीं कर पा रही थी क्योंकि "पिता के पास जाने की कभी-कभी उसकी इच्छा प्रबल होती थी, परन्तु जब वह सोचती कि पिता ने उसे बिना इच्छा के बेच दिया है, वह क्रोध और दर्प से कहती नहीं-नहीं, कभी नहीं- मैं कभी उस घर न जाऊँगी| उन्होंने मुझे बेच दिया है| मेरे साथ अन्याय किया है| मैंने उनकी आज्ञा पालन करके अपने कर्तव्य पितृ-भक्ति को पूर्ण कर दिया, बस अब अधिक और नहीं|"[68]

अमला लाख प्रयास करने के बावजूद अपने आपको नवीन के प्रति समर्पित नहीं कर पा रही थी| वह अक्सर सोचती रहती थी कि सबकुछ भूलकर नवीन के सीने से लग जाए और एक नई जिंदगी की शुरुआत करे परन्तु लाख चाहते हुए भी वह ऐसा न कर पायी, क्योंकि उसकी

आत्मा इस कार्य के लिए उसे इजाजत न देती थी| नवीन की कुछ बातें भी उसे इस मिलन के बीच दीवार की भाँति लगती थी, जबकि नवीन ने सदा ही उसे अपनी धर्मपत्नी माना| हर सुःख-दुःख में उसके साथ रहा, उसे घुमाने के लिए न जाने कितने स्थानों पर ले गया मगर अमला ने तो पिघलने का नाम ही नहीं लिया| उसके दिमाग में यह बात बराबर गूंजा करती थी कि मेरी शादी नहीं हुई है बल्कि मेरे साथ सौदा हुआ है| जैसा कि "कभी-कभी उसके मन में होता, मैं उनके हृदय से जा लगूं| स्त्रीत्व की यह नैसर्गिक गति थी| पर उसकी शिक्षा, संयम, आत्म-सम्मान उसे रोकता था| वह कहती, वही क्यों नहीं आकर मांफी मांगते! पहले उसका ख्याल था, मैं कभी उन्हें माफ न करूंगी, फिर सोचने लगी, अगर सच्चे मन से माफी मांगे तो? परंतु उन्होंने तो मुझे चुनौती दी है, चुनौती| और कैसी गर्वोक्ति है- अभी खरीदा ही है अब विजय करूंगा| विजय करेंगे वे? नहीं-नहीं| कभी नहीं| देखूंगी कैसे वे विजय करते हैं|"[69]

अमला सोचती है कि क्यों न मैं कोई छोटी-मोटी नौकरी कर लूं, जिससे मेरा समय भी व्यतीत हो जायेगा और मैं नवीन के पांच लाख रुपये भी वापस कर दूंगी और मेरे मन का बोझ भी हल्का हो जाएगा| सहमति हेतु वह नवीन के पास जाती है और उनसे एक नौकरी के लिए सहयोग करने के लिए कहती है| नवीन ने तो पहले मना कर दिया कि प्रिये तुम्हें नौकरी की क्या जरूरत है| भगवान का दिया हुआ सब कुछ तो हमारे पास है फिर भी यदि तुम नौकरी करना ही चाहती हो तो मैं तुम्हें

रोकूंगा नहीं| अमला ने कहा कि मुझे आपका सहयोग चाहिए और मैं नौकरी करके अपने पिताजी के ऊपर चढ़े पांच लाख का कर्ज उतारना चाहती हूँ| नवीन ने मुस्कुराकर कहा- ठीक है जैसा तुम उचित समझो| अगले दिन नवीन ने अमला से कहा कि “एक बड़े फर्म की मैनेजरी की नौकरी है| वेतन मिलेगा हजार रुपये महीना| मगर एक लाख की नगद जमानत चाहिए| नवीन बाबू मुस्कुराहट छिपाने के लिए दूसरी ओर देखने लगे| इतनी भारी जमानत मैं कहां से दे सकूंगी| आपके लिए मैं जमानत दे सकता हूँ| अगर आप दो बातों का वचन दें| दो बातें कौन? एक यह कि आप उसे स्वीकार करें, दूसरी मेहनत से और ईमानदारी से काम सीखें, समझें और करें|”[70]

इसके पश्चात नवीन ने अपनी पत्नी को अपनी ही कम्पनी में एक मैनेजरी के पद पर रखवा दिया| धीरे-धीरे समय बीतता गया और अमला अपना काम बखूबी सीखती गई| वह ऑफिस का सारा काम सुचारू रूप से करने लगी| सभी लोग उसकी बहुत ही तारीफ करते थे फिर कुछ समय बाद नवीन अपनी दूसरी कम्पनी जो कि जापान में थी, कुछ आवश्यक कार्य हेतु एक महीने के लिए चले जाते हैं| इधर जब अमला अकेले काम करती है तो उसे रह-रह के अपने पति नवीन की बहुत याद आती है| वह उनसे मिलने के लिए तड़प उठती है| अपनी कमाई के सारे रुपये नवीन को देने के लिए वह अपने खाते में जमा भी करती थी| एक दिन कम्पनी को बहुत लम्बा घाटा हो गया और असिस्टेंट ने बताया कि मैडम परसों

तक यदि 50 लाख रुपये की व्यवस्था न हो पाई तो पूरी कम्पनी डूब जाएगी| अमला बहुत ही बेचैन होती है कि बिना नवीन के इतने सारे रुपये कहाँ से आएंगे फिर समझदारी दिखाते हुए उसने कुछ कम्पनी के पैसे तथा कुछ अपने गहने वगैरह बेचकर कुल चालीस लाख रुपये ही एकत्र कर पाई। अब भी 10 लाख रुपये कम पड़ रहे थे| वह समय भी आ गया जब कम्पनी डूबने वाली थी| 10 मिनट शेष थे तभी नवीन 50 लाख रुपये के सूटकेस के साथ आते दिखाई पड़ते हैं| तुरंत सबके सब अचम्भित हो जाते हैं जबकि चिंता के मारे अमला पहले ही बेहोश हो जाती है| नवीन आकर सबको बचा लेता है और जब अमला को होश आता है तो वह अपने आप को नवीन की गोद में पाती है| नवीन उससे कहता है कि अब चिंता करने की कोई बात नहीं है| 50 लाख रुपये देकर मैंने कंपनी को डूबने से बचा लिया है| इधर अमला की आंखों से बराबर पश्चाताप के आंसू गिर रहे थे| वह नवीन से लिपट जाती है और कहती है कि मुझे कुछ नहीं चाहिए| मैं तुम्हारे बगैर नहीं रह सकती हूँ। तुम सच में मुझे खरीदने के बाद अब विजित भी कर चुके हो| आज मैं अपनी हार मानती हूँ| अब कभी-भी तुम मुझे छोड़कर नहीं जाओगे क्योंकि इस एक महीने में ही मैं तुम्हारे वियोग में पागल सी हो गई हूं। अब आगे से हम पति-पत्नी की तरह जीवन व्यतीत करेंगे| एक बात और आज मुझे अपने पिता जी के ऊपर गर्व हो रहा है जो उन्होंने मेरी शादी तुम्हारे साथ कर दी थी क्योंकि तुम्हारे जैसा पति हर किसी को नहीं मिल सकता| मैं

व्यर्थ ही अब तक तुमसे नफरत करती रही| बस अब एक ही इच्छा यह है कि आप मुझे एक बार मेरे पिताजी से मिलवा दीजिये| नवीन अति प्रसन्न होकर कहता है कि हम कल सुबह ही तुम्हारे पिताजी के घर चलेंगें| अमला बहुत प्रसन्न हो जाती है।

मिस्टर राबर्ट-

मिस्टर राबर्ट नवीन की कम्पनी में एक मैनेजर थे| राबर्ट एक शांत स्वभाव वाले एवं सहनशील व्यक्ति थे| पूरी कम्पनी की जिम्मेदारी वे अपने कंधे पर लिए सम्भाल रहे थे| नवीन उनकी प्रतिभा, ईमानदारी तथा धैर्य के कायल थे| वे उस पर अटूट विश्वास भी करते थे| अपनी पत्नी अमला को नवीन ने मिस्टर राबर्ट के ही स्थान पर मैनेजरी का पद दिया था| नवीन ने मि0 राबर्ट को अपनी जापान वाली कम्पनी में भेज दिया था ताकि अमला भी अपना पूरा प्रयास करके देख ले और मुझे समझने का भी उसको मौका मिले|

प्रस्तुत कहानी के माध्यम से आचार्य जी ने एक स्वाभिमानी युवती तथा धनवान युवक के विवाहोपरान्त, युवती के स्वाभिमान तथा उसके पति के धन के बीच का संघर्ष अत्यंत ही रोचक पूर्ण दिखाने का प्रयास किया है| इस कहानी के पात्र सचमुच ऐसे हैं कि उनकी वीरता, लगन, ईमानदारी तथा प्रतिष्ठा को देखकर, हर कोई उनके कार्यों के प्रति आकृष्ट हो जाता है| समाज में पति-पत्नी के सम्बन्धों के बीच में कितनी भी कड़वाहट क्यों न हो, इस कहानी के पात्रों के संवाद अथवा कार्यों के प्रति

लगन एवं प्रतिष्ठा द्वारा, पति-पत्नी के बीच मधुर सम्बन्धों को स्थापित होते हुए आसानी से देखा जा सकता है

वर्गगत पात्र :--

आचार्य चतुरसेन शास्त्रीजी की कहानियों में वर्गगत पात्र भी सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं| प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में घटित होने वाली घटनाएँ अपने आप में कहानी का विषय हैं। आज कई व्यक्ति कहानी लिखते हैं और कई लोग कहानी लिखना भी जानते हैं परन्तु जानकारी के अभाव में ठीक से नहीं लिख पाते हैं| कहानी क्या हैं? कहानी मानव सभ्यता के साथ चलने वाली वह कला है जो मानवों को अतीत से वर्तमान तक जोड़ने का काम करती है। साथ ही कहानी वह माध्यम है जिसके द्वारा जीवन के गूढ़ रहस्यों को हँस-बोलकर साधारण शब्दों में समझाया जा सकता है| वैसे तो हमारे समाज में कहानी कहने और सुनने की प्रथा सदियों पुरानी है फिर भी आधुनिक काल में लेखन के क्षेत्र में कहानी गद्य की एक विधा के रूप में मानी जाती है जिसकी प्रसिद्धि हर क्षण बढ़ती जा रही है| उपन्यास की ही भांति कहानी भी साहित्य की एक लोकप्रिय विधा है| जहाँ तक कहानी के अर्थ की बात करें तो कहानी का अर्थ होता है- कहना अर्थात जो कुछ भी कहा जाये वह कहानी के अंतर्गत आता है किन्तु वर्तमान साहित्य में यह कहानी शब्द विधा-विशेष के लिए रूढ़ हो गया है| जबकि आधुनिक कहानी एक सोद्देश्य रचना है जो कही

नहीं जाती बल्कि रची जाती है| यदि कहानी के तत्वों की बात की जाये तो कहानी में भी उपन्यास की ही तरह 6 तत्व होते हैं-

1- कथानक या कथावस्तु

2- पात्र एवं चरित्र- चित्रण

3- संवाद

4- भाषा-शैली

5- वातावरण

5- उद्देश्य|

कहानी में सर्वप्रथम कथानक या कथावस्तु होती है| कहानी की कथावस्तु बिल्कुल संक्षिप्त होती है, जिसके कारण कहानी का कथानक कहीं से भी लिया जा सकता है| जीवन का कोई भी क्षण कहानी का रूप ले सकता है जैसे- इतिहास, पुराण, घटना, दुर्घटना, कार्यक्रम, संयोग आदि| अभिप्राय यह है कि कहीं से भी कोई भी विषय कहानी के लिए चुना जा सकता है| अच्छी कहानी के लिए कथानक का संक्षिप्त होना अति आवश्यक है| साथ ही साथ कथानक की घटनाओं के बीच परस्पर सम्बन्ध भी होना आवश्यक है| कहने का आशय यह है कि कहानी की बुनावट ऐसी हो कि जिससे पाठक को कहानी पढ़ते समय क्षण भर भी उठकर जाने की इच्छा न हो और कौतूहल एवं जिज्ञासा पाठक को आदि से अंत तक बांधकर रखे किन्तु ऐसा कदापि नहीं होना चाहिए कि

कहानीकार ने पाठक को जबरदस्ती बांध रखा है| इस प्रकार कथानक का सब कुछ तय हो जाने के बाद कहानी का दूसरा तत्व आता है- पात्र एवं चरित्र-चित्रण| चूँकि कहानी में उपन्यासों की अपेक्षा पात्रों की संख्या कम होती है अतः कहानी में चरित्र-चित्रण का विशेष महत्व होता है| कहानी किसी न किसी चरित्र के आधार पर ही लिखी जाती है, लेकिन समयाभाव होने के कारण चरित्र का पूर्ण विकास दिखा पाना संभव नहीं हो पाता है| अतः पात्रों के ऐसे चरित्र पर प्रकाश डाला जाता है, जिससे कि पात्रों का व्यक्तित्व झलक उठे| वही कहानी प्रभावशाली, श्रेष्ठ एवं कालजीवी होती है जिसके पात्र पूर्ण व्यक्तित्व वाले और सजीव प्रतीत होते हैं| यही कारण है कि कुछ कहानियों के पात्रों जैसे 'दो बैलों की कथा' के पात्र हीरा, मोती और झूरी, 'कफ़न' कहानी के पात्र घीसू और माधव, 'हार की जीत' कहानी के पात्र बाबा भारती और खड्ग सिंह को भला कौन नहीं जानता? उपर्युक्त सभी कहानियां अपने-अपने पात्रों के नाम से भी याद रखी जाती हैं|

जैसा कि सर्वविदित है कि प्रत्येक कहानी में कुछ पात्र होते हैं जो कथानक के निर्जीव नहीं बल्कि सजीव संचालक होते हैं| इसमें देखा जाए तो एक ओर कथानक का आरम्भ, विकास और अंत होता है, वहीं पर दूसरी ओर हम इनसे आत्मीयता, अपनापन भी प्राप्त करते हैं| पात्रों की हम बात करें तो कहानी में मुख्य रूप से दो प्रकार के पात्र होते हैं|

1. वर्गगत पात्र अर्थात् वे पात्र जो अपने वर्ग की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं|
2. व्यक्तिगत पात्र अर्थात् वे पात्र जिनकी निजी विशेषताएं होती हैं|

आचार्य चतुरसेन शास्त्री की कहानियों में अधिकतर कहानियां ऐसी हैं, जिनके पात्र वर्गगत हैं और वे अपने वर्ग के समूह या गुट की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करते दिखाई पड़ते हैं| जैसे- 'मूल्य' कहानी में नवीन वर्गगत पात्र है जो समय-समय पर अपनी कम्पनी के सभी सदस्यों के लिए अथक परिश्रम करता है| नवीन एक बहादुर, धैर्यशाली तथा आपत्ति के समय में कभी विचलित न होने वाला व्यक्ति है| नवीन अपनी कम्पनी के डूब जाने की खबर मिलने के पश्चात जरा सा भी विचलित नहीं होता है अपितु वह साहस और धैर्य के साथ आपत्तियों का सामना करने के लिए तुरंत ही प्रयासरत हो जाता है| कम्पनी की तथा कम्पनी के सभी सदस्यों की भलाई के लिए वह तुरंत 50 लाख रुपये की व्यवस्था करके जापान से वापस चला आता है और कई घरों को बेघर होने से बचा लेता है| सभी कर्मचारी उसकी इस महानता से अपने आपको धन्य महसूस करते हैं और नवीन को बहुत सारी दुवाओं से नवाजते हैं|

1- रघुपति सिंह-

रघुपति सिंह जब देश के चरणों में आत्मसमर्पण करने के लिए निकलता है तो उस समय उसका पुत्र अत्यंत बीमार रहता है परन्तु रघुपति सिंह अपनी पत्नी व पुत्र की चिंता न करते हुए तुरंत अकबर से

लोहा लेने के लिए युद्ध में कूद पड़ता है और स्वयं बंदी बनने के लिए हाजिर हो जाता है, क्योंकि वह अपने साथियों व महाराणा प्रताप को जरा सा भी चोट नहीं पहुँचाना चाहता था| वह अत्यंत वीर और स्वामिभक्त योद्धा था।

2- विश्वास पर विश्वास-

प्रस्तुत कहानी में रामसिंह एक ऐसा पात्र है जिसने किसी की खुशियों को बरकरार रखने के लिए अपने प्रमोशन तक को ठुकरा दिया क्योंकि वह किसी की खुशियों को कुचलकर प्रमोशन नहीं चाहता था। रामसिंह चाहता तो 'नंदू' के घर से मिले हुए खजाने को पुलिस विभाग में पहुंचाकर, अपना प्रमोशन करवा सकता था परन्तु उसने अपने साथियों तथा देश के प्रति वफादारी निभाते हुए पूरा बरामद माल उस डाकू की पत्नी मैना को पुनः वापस कर देता है| रामसिंह बड़ा साहब न बनकर छोटा ही बना रह जाता है| रामसिंह चाहता तो डाकू की पत्नी से किया हुआ वादा तोड़ सकता था परन्तु उसने अपने प्रमोशन के लालच में न पड़कर उसके पास सारा माल पुनः वापस पहुंचा देता है| जैसा कि इस कहानी में वर्णित है "परन्तु मैं? अभी क्षण भर बाद नवीन पदवी और वेश धारण कर उसकी आँखों की साध मिटा सकता हूँ| माता कितने उल्लास से मेरी विजय कहानी सुनेगी| परन्तु वह.... कितने क्षण यह देख सकेगी| फिर वह विजय किस वीरता की है? हे परमेश्वर! क्या मैं उसके विश्वास, वीरत्व, प्रेम और स्त्रीत्व के प्रति विश्वास घात नहीं कर रहा हूँ|

यही मेरा पौरुष है, धिक्कार है इस पर! युवक गठरी को छाती से लगाकर रोने लगा|"[71]

इस तरह रामसिंह एक स्त्री की भावनाओं को महत्व देते हुए अपनी तरक्की को लात मार देता है| प्रस्तुत कहानी में एक बार फिर कर्तव्य, ईमानदारी और सच्चाई की जीत होती है और धन- दौलत इसके आगे फीके पड़ जाते हैं।

3- भाई की विदाई-

यह एक बहुत ही दर्दनाक कहानी है| इस कहानी का पात्र देवीसिंह वैसे तो अधिकतर लोगों की नजर में एक गुंडा और अपराधी था लेकिन जो लोग उसको अच्छी तरह से जानते थे वे उसे बहुत ही नेक इंसान मानते थे| देवीसिंह एक ऐसा गुंडा था जो कभी किसी को गलत कार्य नहीं करने देता था| यह गलत कार्य चाहे उसके अपने साथी ही क्यों न करें| वह एक अपराधी को कभी माफ़ नहीं करता था| जिस प्रकार से प्रस्तुत कहानी में नायक देवीसिंह ने लूटपाट करने गये एक घर में जब उसका साथी ही उस घर की कृष्णा नामक युवती के साथ जबरदस्ती अभद्र व्यवहार कर रहा था तभी देवीसिंह क्रोध से लाल होते हुए अपने ही साथी को अपनी बन्दूक की गोली से मौत के घाट उतार देता है| वह चाहता तो उसे क्षमा दान दे सकता था परन्तु उसके लिए अपराधी की एक मात्र सजा- सिर्फ और सिर्फ मौत थी| नायक देवीसिंह अपने साथियों का नेतृत्व करते हुए चोरी और डकैती को अंजाम तक पहुंचाता था| जैसा यहाँ देखने

को मिलता है कि “नायक छत पर खड़ा था| उसके एक हाथ में सर्च लाइट और दूसरे में भरा हुआ रिवाल्वर था| दो और रिवाल्वर उसके जेबों में थे| वह प्रत्येक डाकू की गतिविधि का निरीक्षण कर रहा था और साहसिक शब्दों से अंग्रेजी में प्रत्येक को आज्ञा दे रहा था|”[72]

देवीसिंह एक ऐसा पात्र है जो अपने पूरे वर्ग का प्रतिनिधित्व करता हुआ दिखाई पड़ता है| वह एक गुंडा तथा अपराधी के नाम से मशहूर अवश्य था परन्तु कभी किसी को अनायास या बिना गलत कार्य के सताया नहीं करता था| हाँ! वह चोरी और डकैती तो करता था लेकिन अमीरों, सूदखोरों और हराम का माल इकट्ठा करने वालों के घर पर| जब वह लूटकर वापस लौटता तो उस लूट का एक भी पैसा उसे खाने के लिए गंवारा न था| लूट का सभी पैसा और सामान वह गरीबों, दुखियों तथा असहायों में बाँट देता था| यही कारण था कि बहुत लोग उसे एक नेक इंसान समझते थे| हम अक्सर अपने गांव, समाज या जनपद में देखते हैं कि यदि अपराधी अपने घर, रिश्तेदार अथवा परिचित का होता है तो लोग उसे सजा दिलवाने के बजाय छुड़वाने का प्रयास करते हैं। परन्तु देवीसिंह कभी भी किसी अपराधी को नहीं छोड़ता था चाहे उसके घर का ही कोई सदस्य ही क्यों न हो| वह गलत के लिए गलत और सही के लिए सही था| कृष्णा के यह पूछने पर कि जब तुम इतने सभ्य और अच्छे बनते हो तो फिर इस तरह के घृणित कार्य क्यों करते हो? तुम कोई नेक काम क्यों नहीं करते हो? इस पर देवीसिंह जवाब देता है कि ये

सब हम इस अभागे देश के लिए करते हैं, जिसके लिए हमने अपने शरीर के लहू का हर कतरा और पूरा शरीर भी न्योछावर कर दिया है|

व्यक्ति पात्र-

वर्गगत पात्रों का वर्णन कर लेने के पश्चात अब यहां पर हम व्यक्ति पात्रों का वर्णन करेंगे| आचार्य जी की कहानियों में व्यक्ति पात्र भी अपनी विशेषताओं के कारण काफी चर्चा में रहे हैं| उनके कहानियों के व्यक्ति पात्र कुशल, ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ, धैर्यशाली, वीर तथा साहसी दिखाई पड़ते हैं| इन पात्रों के जीवन चरित्र के माध्यम से पाठक को एक सीख मिलती है और पाठक ऐसे पात्रों को बड़े ही मनोयोग के साथ पढ़ते हैं|

1- मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ-

प्रस्तुत कहानी सरल, पारिवारिक एवं प्रेम-भावना से परिपूर्ण है| इस कहानी के द्वारा आचार्य जी ने एक पवित्र और निष्पक्ष प्रेम की अभिव्यंजना की है| रम्भा और बंशी जैसे पात्रों के द्वारा इस कहानी को अंतिम मुकाम तक पहुँचाया गया है| बंशी एक गरीब तथा भेड़ चराने वाला लड़का था| बचपन में ही उसकी मुलाकात रम्भा नामक एक लड़की से हो जाती है| धीरे-धीरे दोनों की दोस्ती बढ़ती जाती है और समय के साथ-साथ दोनों बड़े भी हो जाते हैं| बंशी को रम्भा से प्यार हो जाता है परन्तु बचपन का प्यार अक्सर जवानी में अलग हो ही जाता है| वही

बंशी के साथ भी हुआ| बंशी एक ऐसा व्यक्ति पात्र है, जो अपने आखिरी सफ़र तक रम्भा से ही प्रेम करता रहा| रम्भा भी पहले उसे बहुत प्रेम करती थी परन्तु बड़ी होने पर वह एक नाटक मण्डली में शामिल हो जाती है और धीरे-धीरे बंशी को भुला देती है| बंशी उसे हर वक्त अन्दर ही अन्दर प्यार करता रहा, उसका इंतजार करता रहा| बंशी के अन्दर अहंकार, लोभ इत्यादि कुछ भी बिल्कुल नहीं था| वह सत्य की कमाई से अपना और अपने परिवार का पेट पालता रहा| एक समय आया जब रम्भा की आँखें एक दुर्घटना में चली जाती हैं और उसके सभी दोस्त, मालिक, सगे सम्बन्धी उसे अकेला छोड़ देते हैं| तब वह बहुत उदास एवं निःसहाय होकर पुनः अपने प्रेमी बंशी को याद करती है| बंशी ने तो उससे सच्चा प्रेम किया था, उसे अपने घर की लक्ष्मी स्वरूप स्वीकार कर शादी कर लेता है| वह चाहता तो रम्भा को उसके किये हुए की सजा भी दे सकता था, परन्तु वह अपनी निःस्वार्थ प्रेम भावना के कारण उसको अपना लेता है| वह रम्भा से कहता है कि "प्यारी रम्भा, मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ| मेरी आत्मा तुम्हें अर्पण है|"[73]

2- तस्वीर-

तस्वीर कहानी में मिस्टर वेदवार ऐसे व्यक्ति पात्र हैं जो अपनी फोटोग्राफी को बहुत ही अनोखा समझते हैं| उनका मानना है कि फोटोग्राफी, चित्रकला से भी बढ़कर है, जबकि उनके मित्र भरूचा का कहना है कि "एक फोटो ग्राफर उन्हीं चीजों की छाया उतार सकता है,

जिन्हें अपनी आँखों से देख सकता है, परन्तु सच्चा चित्रकार वह है जो विचारों की तस्वीर खींचता है| वे विचार जिनकी कोई मूर्ति नहीं है, चित्रकार की कूची से ही जैसे अवतार बनकर आँखों के सामने आते हैं और तब हम देखते हैं कि उसमें अमूर्त को मूर्त बनाने का गुण है, जो केवल ईश्वर में है|”[74]

मिस्टर वेदवार का मानना था कि मैं हर प्रकार की तस्वीर बना सकता हूँ| जो तस्वीर एक चित्रकार अपनी कूची के द्वारा बना सकता है, उसे मैं अपनी फोटोग्राफी के माध्यम से भी बना सकता हूँ| प्रस्तुत कहानी में मिस्टर वेदवार की कला, प्रतिभा, सत्यता, लगन व निष्ठा इत्यादि गुणों को बड़ी सावधानी के साथ उकेरा गया है, जो कहानी को सफलता प्रदान करते हैं| वास्तव में मिस्टर वेदवार एक ऐसी तस्वीर बनाकर सबके सामने पेश करते हैं, जिसमें लगभग उनका 36 हजार रुपया खर्च हो गया था| मिस्टर वेदवार ने यह तस्वीर सर फाजल भाई की शर्त के कारण बनाया था, जिसे पूरे मुंबई के फोटोग्राफर देखने आए और सभी ने मिस्टर वेदवार की इस कला की भरपूर प्रशंसा की|

3- कहानी ख़त्म हो गई-

इस कहानी में मुख्य व्यक्ति पात्र के रूप में मिस्टर चौधरी उभरकर सामने आते हैं जिनका परिवार बहुत ही सभ्य तथा सुशील था| चौधरी के पिताजी गाँव के प्रतिष्ठित जमींदार थे। गाँव के समस्त लोगों की सुख-सुविधाओं का ध्यान रखते थे| भगवान की कृपा से उनके घर में

किसी चीज की कमी न थी| चौधरी अपने पिताजी के इकलौते पुत्र थे और लॉ की पढ़ाई एक अच्छी सी युनिवर्सिटी में करते थे| इस कहानी में गाँवों की प्राचीन परम्पराओं, सभ्यता एवं संस्कारों का भी वर्णन लेखक ने बड़ी कर्मठता से साथ दिखाने का प्रयास किया है| "गाँव में सब छोटे-बड़ों का सम्बन्ध- चाचा, ताऊ, भाई, भतीजा, देवर, भाभी, काकी, ताई आदि पारिवारिक सम्बन्ध हैं| यहाँ तक कि गाँव की लड़की जिस दूसरे गाँव में ब्याही जाती है, उस गाँव का पानी भी न पीने वाले वृद्ध पुरुष अब भी गाँवों में जीवित हैं| यह है हमारे गाँवों की परिवार-परम्परा शताब्दियों, सहस्राब्दियों से चली आती हुई|"[75]

चौधरी जी अपने पिता के मृत्यु के पश्चात घर एवं गाँव का सारा काम-काज अपने ऊपर ले लेते हैं| गाँव की समस्त जनता का ध्यान रखना उनकी जिम्मेदारी थी| वे प्रयास करते थे कि हमारे गाँव में कोई गरीब या बेबस, लाचार, दुर्बल या रोगी को किसी भी प्रकार की पैसे या अन्य चीजों की समस्या उत्पन्न न होने पाए| चौधरी साहब अपनी इन तमाम विशेषताओं के कारण पूरे गाँव में प्रसिद्ध हो गए थे| गाँव के यदि किसी भी पुरुष या महिला को कुछ भी आवश्यकता पड़ती थी तो वे निःसंकोच चौधरी साहब का दरवाजा खटखटाते थे| चौधरी जी का दिल बहुत ही उदार, धैर्यशाली तथा परोपकारी जैसे गुणों से परिपूर्ण था| उनकी उदारता का परिचय ऐसे ही लगाया जा सकता है कि वे लोंगों को भैंस पालने तथा छोटा-मोटा काम धन्धा शुरू करने के लिए भी सहयोग करते

थे, परन्तु लाख अच्छाई होने के साथ-साथ उनमें कुछ कमियां भी दिखाई पड़ती हैं| उनकी जमींदारी की सर्वराहदार की बेटी थी जिससे उन्हें धीरे-धीरे प्रेम हो जाता है| परन्तु इसी बीच उस लड़की के पिता की मृत्यु हो जाती है और वह बेचारी एकदम से निःसहाय हो जाती है| हालांकि उसकी शादी हो गई थी लेकिन भाग्य की मारी उसके पति की मृत्यु हो जाती है| चौधरी जी उसको खाने-पीने का सारा सामान उसके घर पहुँचवा देते थे| इसी बीच चौधरी की शादी सुषमा नाम की एक कन्या से हो जाती है| सुषमा जब पेट से होती है तब उसकी देखभाल के लिए उस विधवा स्त्री को अपने घर पर रख लेते हैं| इसी दौरान उनका उस विधवा स्त्री के साथ प्रेम सम्बन्ध प्रगाढ़ हो जाता है। बाद में जब उस विधवा के पेट में उनका बच्चा पल रहा होता है तो वह लोक लज्जा के कारण आत्महत्या कर लेती है और चौधरी जी को उस घटना के बाद हर क्षण पश्चाताप की अग्नि में जलना पड़ता है|

4- विश्वास पर विश्वास-

विश्वास पर विश्वास कहानी का व्यक्ति पात्र नन्दू है| नन्दू 50 वर्ष की उम्र को पार कर चुका था| वह अत्यंत बलिष्ठ और बहादुर व्यक्ति है| वह पहाड़ों के बीच जंगल के किनारे एक झोपड़ी में रहता है| उस झोपड़ी में उसके साथ उसकी पत्नी मैना भी लगातार कई वर्षों से रह रही थी| नन्दू एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने शरीर की साज-सज्जा तथा साफ-सफाई पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देता| उसका कार्य चोरी करना, लूट-

पाट, डकैती इत्यादि है| पुलिस विभाग की ओर से अक्सर उसको पकड़ने के लिए, सिपाहियों को उसके अड्डे पर भेजा जाता था। पर उसकी चतुराई, उसके दिमाग तथा उसके कार्यों की दाद देनी पड़ेगी| इतने लम्बे समय के अन्तराल पर भी अभी तक उसको पुलिस पकड़ नहीं सकी न ही उसके द्वारा छिपाए गए लूट का माल ही कभी पकड़ा गया| उसकी पत्नी मैना 25 वर्ष की एक सुंदर स्त्री थी जिसने किसी भी काम के लिए कभी अपने पति नन्दू से शिकायत नहीं की| मैना इतनी सुन्दर व आकर्षक थी कि उसे जो एक बार जी भर के देख ले तो उसका दीवाना हो जाये| नन्दू अपने द्वारा एकत्रित किये हुए धन को उसी झोपड़ी में ही छिपा देता है लेकिन आज तक उस दौलत पर किसी की नज़र नहीं पड़ी| नन्दू की कार्यकुशलता और उसके कुशाग्रबुद्धि का ही परिणाम है कि उसकी पत्नी भी उसे छोड़कर नहीं जाना चाहती थी| अंततः सिपाही रामसिंह और उसके बीच प्रेम सम्बन्ध हो जाने के कारण नन्दू और मैना दोनों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ता है|

5- वीर बादल-

चित्तौड़ की महारानी पद्मनी की प्रतिष्ठा को एक अल्पवयस्क बालक बादल ने अपने शौर्य और साहस तथा कुशाग्र बुद्धि के बल पर बचाया, उसी का अत्यंत मार्मिक वर्णन प्रस्तुत कहानी में चित्रित किया है| वीर बादल ने महारानी को किस प्रकार से अपनी जान पर खेल कर बचाया यह किसी से छिपा नहीं है| अलाउद्दीन जब महाराणा को अपने

यहाँ कैद कर लेता है और बदले में पद्मिनी को दिल्ली आने को कहता है| तत्पश्चात पद्मिनी, गोरा और बादल नामक वीर अपनी वीरता का परचम लहराते हुए, बहुत से सैनिकों को डोलियों में भरकर दिल्ली पहुंचते हैं और अलाउद्दीन की सेना को गाजर मूली की तरह काटना शुरू कर देते हैं| “बादल को पठानों ने घेर लिया था, पर वह बादल किले के नीचे पथ पर खड़ा दोनों हाथों से तलवार चला रहा था| गोरा ने तलवार चलाते-चलाते कहा, वाह बेटे, खूब खेत काट रहे हो|”[76]

कहानी में वीर बादल की वीरता, धैर्यता, कार्य- कुशलता तथा उसकी नैसर्गिक बुद्धि की झलक स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है| निष्कर्ष इस अध्याय में आचार्य जी ने समाज में फैली कुरीतियों, आडंबरों तथा भ्रष्ट्राचार को अपनी कहानियों के माध्यम से उजागर करने का प्रयास किया है। हम सच्चाई के पथ पर चलकर, अपने कर्तव्यों का पालन करके, परोपकार की भावना को अपने मन में संजोकर इन सब कुत्सित विचारों से आगे निकलकर एक नए आदर्श समाज की स्थापना कर सकते हैं। प्रस्तुत कहानी के माध्यम से पुराने रीति-रिवाजों, प्रथाओं, परंपराओं का वर्णन किया गया है जो सदियों से आज भी अपनी गरिमा को कायम किए हुए हैं। इस प्रकार प्रस्तुत अध्याय में हमने चतुरसेन शास्त्री की कहानियों के पुरुष पात्रों के अंतर्गत ऐतिहासिक, अर्ध-ऐतिहासिक,

काल्पनिक, वर्गगत एवं व्यक्ति पात्रों का विस्तृत एवं गहन अध्ययन किया है|

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 34
2. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 39
3. तातेड़, प्रो. (डॉ.) सोहनराज, मध्यकालीन भारत का इतिहास भाग-1, 2014, जयपुर, पारीक बुक डिस्ट्रीब्यूटर्श, पृष्ठ 94
4. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, 2012, इलाहाबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृष्ठ 68
5. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, 2012, इलाहबाद, लोक भारती प्रकाशन, पृष्ठ 68
6. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 39
7. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (वीर-बादल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 156
8. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (वीर-बादल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 16
9. मुक्तिबोध, गजानन माधव, भारत इतिहास और संस्कृति, 2009, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 164

10. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (नूरजहाँ का कौशल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 20
11. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (नूरजहाँ का कौशल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 20
12. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 141
13. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (नूरजहाँ का कौशल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 22
14. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 144
15. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (नूरजहाँ का कौशल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 22
16. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (शराबी की बात), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 32
17. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (शराबी की बात), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 34
18. तातेड़, प्रो. (डॉ.) सोहनराज, मध्यकालीन भारत का इतिहास भाग-2, 2014, जयपुर, पारीक बुक डिस्ट्रीब्यूटर्श, पृष्ठ 125
19. तातेड़, प्रो. (डॉ.) सोहनराज, मध्यकालीन भारत का इतिहास भाग-2, 2014, जयपुर, पारीक बुक डिस्ट्रीब्यूटर्श, पृष्ठ 125

20. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (शराबी की बात), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 36

21. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 40-41

22. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (रघुपति सिंह), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 164

23. सिंह, अमरेन्द्र कुमार, भारत में मुस्लिम साम्राज्य, 2012, दिल्ली, गुरुकुल पब्लिकेशन, पृष्ठ 126

24. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (रघुपति सिंह), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 163

25. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (रघुपति सिंह), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 163

26. तातेड़, प्रो0 (डॉ.) सोहनराज, मध्यकालीन भारत का इतिहास भाग-2, 2014, जयपुर, पारीक बुक डिस्ट्रीब्यूटर्श, पृष्ठ 76

27. चक्रवर्ती, रणवीर, भारतीय इतिहास का आदिकाल, 2012, नई दिल्ली, ओरियंट ब्लैक स्वान प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ 165

28. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (भिक्षुराज), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 66

29. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (भिक्षुराज), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 79

30. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (चौथी भांवर), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 128
31. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (चौथी भांवर), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 137
32. शर्मा, रामशरण, भारत का प्राचीन इतिहास, 2018, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ 247
33. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, धरती और आसमान (प्रतिदान), 2008, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 70
34. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, धरती और आसमान (प्रतिदान), 2008, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 71
35. चन्द्र, सतीश, मध्यकालीन भारत, 2008, हैदराबाद, ओरियंट ब्लैक स्वान, पृष्ठ 262
36. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 10
37. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 12-13

38. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 262
39. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 262-63
40. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 263
41. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 267
42. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (नवाब ननकू), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 185-86
43. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (नवाब ननकू), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 179
44. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, धरती और आसमान (विश्वास पर विश्वास), 2008, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 118-19
45. ‘शास्त्री’, आचार्य चतुरसेन, धरती और आसमान (विश्वास पर विश्वास), 2008, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 130

46. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (सुखदान), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 45-46

47. प्रेमचंद, 41 अनमोल कहानियां (आखिरी मंजिल) 2021, नोएडा, माप्ले प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ 182

48. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (सुखदान), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 55

49. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (तिकड़म), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 92

50. प्रेमचंद, 41 अनमोल कहानियां (पत्नी से पति) 2021, नोएडा, माप्ले प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, पृष्ठ 127

51. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (तिकड़म), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 93

52. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (तिकड़म), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 94

53. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (चौधरी), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 76

54. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (चौधरी), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 77

55. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 83

56. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 84

57. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 87

58. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 89

59. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 90

60. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 95

61. प्रसाद, जयशंकर, जयशंकर प्रसाद की लोकप्रिय कहानियां (गुण्डा), 2021, नई दिल्ली, प्रभात पेपर बैक्स, पृष्ठ 56

62. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (तस्वीर), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 282

63. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (तस्वीर), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 280

64. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (तस्वीर), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 282

65. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (तस्वीर), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 281

66. वर्मा, वृंदावन लाल, वृन्दावन लाल की प्रमुख कहानियां (कलाकार का दण्ड), 2017, नई दिल्ली, प्रभात पेपर बैक्स, पृष्ठ 125

67. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (तस्वीर), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 283

68. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (मूल्य), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 60

69. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (मूल्य), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 60

70. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (मूल्य), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 63

71. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, धरती और आसमान (विश्वास पर विश्वास), 2008, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 130

72. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (भाई की विदाई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 88

73. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, सोया हुआ शहर (मैं तुम्हारी आँखों को नहीं, तुम्हें चाहता हूँ), 2009, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 267

74. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, दुखवा मैं कासे कहूं (तस्वीर), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 280

75. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, कहानी खत्म हो गई (कहानी खत्म हो गई), 1961, दिल्ली, राजपाल एंड सन्ज, पृष्ठ 11

76. 'शास्त्री', आचार्य चतुरसेन, बाहर-भीतर (वीर-बादल), 2006, नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स, पृष्ठ 159